'कौशिक' जी का कथा-साहित्य

'कौशिक' जी का कथा-साहित्य

[लघु शोध प्रबन्ध]

लेखिका

सुमित्रा शर्मा

एम० ए०

१९६८

साहित्य-प्रकाशन

मालीवाड़ा, दिल्ली-६

अध्याय में 'कौशिक'-पूर्व-हिन्दी-कथा-साहित्य पर सांकेतिक प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय में वर्गीकरण की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए, उनकी वर्गगत विशेषताओं के आधार पर, कुछ प्रतिनिधि कहानियों का परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय में रचना-विधान अथवा रूप-विधान की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों की विवेचना करते हुए लेखक की कहानी कला पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। अन्तिम अध्याय में उपसंहार के रूप में 'कौशिक' जी के कथा साहित्य की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए संक्षिप्त मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

प्रबन्ध रचना के हेतु जिन विद्वानों से मैंने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से विचार, भाव एवं अनुकूल सामग्री प्राप्त की, उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। श्रीमती डॉ० कैलाश प्रकाश—प्राध्यापिका इन्द्रप्रस्थ कॉलेज—के निर्देशन में मैंने इस कार्य को पूर्ण किया है। जिस अपरिमित स्नेह एवं अपूर्व तन्मयता के साथ उन्होंने मेरे इस कार्य में सहयोग दिया, वह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

बसंत पंचमी
संवत् २०२४।

सुमित्रा शर्मा एम० ए०
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

विषय-सूची

अध्याय मे 'कौशिक'-पूर्व-हिन्दी-कथा-साहित्य पर साकेतिक प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय मे वर्गीकरण की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियो का मूल्याकन करते हुए, उनकी वर्गगत विशेषताओ के आधार पर, कुछ प्रतिनिधि कहानियो का परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय मे रचना-विधान अथवा रूप-विधान की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियो की विवेचना करते हुए लेखक की कहानी कला पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। अन्तिम अध्याय मे उपसहार के रूप मे 'कौशिक' जी के कथा साहित्य की विशेषताओ का उल्लेख करते हुए सक्षिप्त मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है।

प्रबन्ध रचना के हेतु जिन विद्वानों से मैंने प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से विचार, भाव एव अनुकूल सामग्री प्राप्त की, उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। श्रीमती डॉ० कैलाश प्रकाश—प्राध्यापिका इन्द्रप्रस्थ कॉलेज—के निर्देशन मे मैंने इस कार्य को पूर्ण किया है। जिस अपरिमित स्नेह एव अपूर्व तन्मयता के साथ उन्होंने मेरे इस कार्य मे सहयोग दिया, वह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

बसत पचमी
सवत् २०२४।

सुमित्रा शर्मा एम० ए०
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

अध्याय मे 'कौशिक'-पूर्व-हिन्दी-कथा-साहित्य पर साकेतिक प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय मे वर्गीकरण की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियो का मूल्याकन करते हुए, उनकी वर्गगत विशेषताओ के आधार पर, कुछ प्रतिनिधि कहानियो का परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय मे रचना-विधान अथवा रूप-विधान की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियो की विवेचना करते हुए लेखक की कहानी कला पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। अन्तिम अध्याय मे उपसहार के रूप मे 'कौशिक' जी के कथा साहित्य की विशेषताओ का उल्लेख करते हुए सक्षिप्त मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है।

प्रबन्ध रचना के हेतु जिन विद्वानो से मैंने प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से विचार, भाव एव अनुकूल सामग्री प्राप्त की, उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। श्रीमती डॉ० कैलाश प्रकाश—प्राध्यापिका इन्द्रप्रस्थ कॉलेज—के निर्देशन मे मैंने इस कार्य को पूर्ण किया है। जिस अपरिमित स्नेह एव अपूर्व तन्मयता के साथ उन्होंने मेरे इस कार्य मे सहयोग दिया, वह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

बसत पचमी
सवत् २०२४।

सुमित्रा शर्मा एम० ए०
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

विषय-सूची

अध्याय मे 'कौशिक'-पूर्व-हिन्दी-कथा साहित्य पर साकेतिक प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय मे वर्गीकरण की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियो का मूल्याकन करते हुए, उनकी वर्गगत विशेषताम्रो के आधार पर, कुछ प्रतिनिधि कहानियो का परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय मे रचना-विधान अथवा रूप-विधान की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियो की विवेचना करते हुए लेखक की कहानी कला पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। अन्तिम अध्याय मे उपसहार के रूप मे 'कौशिक' जी के कथा साहित्य की विशेषताम्रो का उल्लेख करते हुए सक्षिप्त मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है।

प्रबन्ध रचना के हेतु जिन विद्वानो से मैंने प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से विचार, भाव एव अनुकूल सामग्री प्राप्त की उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। श्रीमती डॉ० कैलाश प्रकाश—प्राध्यापिका इन्द्रप्रस्थ कॉलेज—के निर्देशन मे मैंने इस कार्य को पूर्ण किया है। जिस अपरिमित स्नेह एव अपूर्व तन्मयता के साथ उन्होने मेरे इस कार्य मे *सहयोग दिया, वह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।*

बसत पचमी
सवत् २०२४।

सुमित्रा शर्मा एम० ए०
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

प्रथम अध्याय

जीवन-वृत्त तथा प्रेरणा-स्रोत

किसी साहित्यकार के साहित्य का मूल्यांकन करने से पूर्व उसके पारिवारिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन, आन्तरिक एवं बाह्य प्रेरणा-स्रोतों से सम्बन्धित समकालीन परिस्थितियों और विचारधाराओं का परिचय प्राप्त कर लेना युक्ति-संगत होगा। आधारभूत परिस्थितियों घटनाओं और सम्पर्कों के ज्ञान से लेखक की प्रेरणाओं, अनुभूतियों तथा चिन्तन-दिशाओं में प्रवेश सम्भव हो जाता है। ये परिस्थितियाँ, घटनाएँ और सम्पर्क लेखक के विचारों और भावनाओं को दिशा प्रदान करते हैं, उसके मानस-पटल पर स्मृति की रेखाएँ अंकित करते हैं, वे धुँधले और स्पष्ट चित्र निर्मित करते हैं, कालान्तर में जिनके रंग उसकी रचनाओं में निखर उठते हैं। लेखक की प्रेरणा के आलम्बन स्वरूप ये घटनाएँ और परिस्थितियाँ आदि वे मूर्त आकार धारण कर उसका मार्ग निर्दिष्ट करती हैं जिनकी अभिव्यक्ति साधारणीकरण द्वारा उसके साहित्य की मूल विषय-वस्तु बनकर पाठकों तक पहुँचती है। बाह्य प्रभाव आन्तरिक शक्तियों को उद्वेलित कर अन्तर्द्वन्द्व को जन्म देते हैं, जिससे जीवन में गति का संचार तथा विकास का मार्ग उन्मुक्त होता है। द्वन्द्वात्मक विकास इन्हीं परिस्थितियों तथा घटनाओं से जन्म लेकर साहित्यकार के विचारों और भावनाओं को पुष्ट करके उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यही व्यक्तित्व लेखक के साहित्य की आधारशिला बनकर उसके रचनात्मक निर्माण में सहायक होता है।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानीकार पण्डित विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' के कथा-साहित्य का अध्ययन प्रस्तुत करने से पूर्व उनके जीवन-सम्बन्धी उन घटनाओं तथा समकालीन परिस्थितियों पर एक दृष्टि डाल लेना अनावश्यक न होगा जिनका इनके व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण योग रहा और जिनके सजीव चित्र इनके साहित्य की अमूल्य-निधि बनकर इनकी रचनाओं में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। 'कौशिक' जी का जन्म १८९१ चैत्रबदी प्रतिपदा को[1] अम्बाला छावनी में हुआ। इनके पिता पण्डित

---

१ "अपनेराम की पैदाइश ठीक चैत्रबदी प्रतिपदा की है।"—'दुबे जी की चिट्ठियाँ', विजयानन्द दुबे, पृष्ठ १८६।

प्रथम अध्याय

जीवन-वृत्त तथा प्रेरणा-स्रोत

किसी साहित्यकार के साहित्य का मूल्यांकन करने से पूर्व उसके पारिवारिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन, आन्तरिक एवं बाह्य प्रेरणा-स्रोतों से सम्बन्धित समकालीन परिस्थितियों और विचारधाराओं का परिचय प्राप्त कर लेना युक्ति-संगत होगा। आधारभूत परिस्थितियों घटनाओं और सम्पर्कों के ज्ञान से लेखक की प्रेरणाओं, अनुभूतियों तथा चिन्तन-दिशाओं में प्रवेश सम्भव हो जाता है। ये परिस्थितियाँ, घटनाएँ और सम्पर्क लेखक के विचारों और भावनाओं को दिशा प्रदान करते हैं, उसके मानस-पटल पर स्मृति की रेखाएँ अंकित करते हैं, वे धुँधले और स्पष्ट चित्र निर्मित करते हैं, कालान्तर में जिनके रंग उसकी रचनाओं में निखर उठते हैं। लेखक की प्रेरणा के आलम्बन स्वरूप ये घटनाएँ और परिस्थितियाँ आदि वे मूर्त आकार धारण कर उसका मार्ग निर्दिष्ट करती हैं जिनकी अभिव्यक्ति साधारणीकरण द्वारा उसके साहित्य की मूल विषय-वस्तु बनकर पाठकों तक पहुँचती है। बाह्य प्रभाव आन्तरिक शक्तियों को उद्वेलित कर अन्तर्द्वन्द्व को जन्म देते हैं, जिससे जीवन में गति का संचार तथा विकास का मार्ग उन्मुक्त होता है। द्वन्द्वात्मक विकास इन्हीं परिस्थितियों तथा घटनाओं से जन्म लेकर साहित्यकार के विचारों और भावनाओं को पुष्ट करके उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यही व्यक्तित्व लेखक के साहित्य की आधारशिला बनकर उसके रचनात्मक निर्माण में सहायक होता है।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानीकार पण्डित विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' के कथा-साहित्य का अध्ययन प्रस्तुत करने से पूर्व उनके जीवन-सम्बन्धी उन घटनाओं तथा समकालीन परिस्थितियों पर एक दृष्टि डाल लेना अनावश्यक न होगा जिनका इनके व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण योग रहा और जिनके सजीव चित्र इनके साहित्य की अमूल्य-निधि बनकर इनकी रचनाओं में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। 'कौशिक' जी का जन्म १८९१ चैत्रवदी प्रतिपदा को[1] अम्बाला छावनी में हुआ। इनके पिता पण्डित

---

[1] "अपनेराम की पैदाइश ठीक चैत्रवदी प्रतिपदा की है।"—'दुबे जी की चिट्ठियाँ', विजयानन्द दुबे, पृष्ठ १०६।

हरिश्चन्द्र 'कौशिक', गगोह—(जिला सहारनपुर) निवासी अम्बाला छावनी म सैनिक स्टोरकीपर मे पद पर कार्य करते थे।

चार वर्ष की आयु मे 'कौशिक' जी को इनके चचा पण्डित इन्द्रसेन ने गोद ले लिया और अपने साथ कानपुर ले गये। इन्द्रसेन जी कानपुर में वकालत करते थे और उनकी आर्थिक स्थिति बहुत सुदृढ़ थी। 'कौशिक' जी का पालन पोषण तथा शिक्षण कानपुर मे ही हुआ परन्तु विद्यालय की शिक्षा मे यह मैट्रिक से आगे न बढ सके। इसके दो प्रमुख कारण थे—प्रथम इनकी विद्यालय की शिक्षा के प्रति अरुचि तथा दूसरा उत्तराधिकारस्वरूप पर्याप्त सम्पत्ति की प्राप्ति। आर्थिक सम्पन्नता के कारण जीवन-यापन के निमित्त विद्यालय की शिक्षा से माथापच्ची करना इन्हें अनावश्यक प्रतीत हुआ। अत इन्होने विद्यालय की शिक्षा का परित्याग कर स्वतन्त्र अध्ययन को लक्ष्य बनाया और अग्रेजी, सस्कृत, उर्दू तथा बँगला मे न केवल अच्छी गति ही प्राप्त की वरन् उनके ग्रन्थो का हिन्दी मे अनुवाद भी किया।[1]

प्रेरणा-स्रोत तथा कथा साहित्य में प्रवेश

मनुष्य का किसी कार्य में प्रवृत्त करने वाले मुख्य प्रेरणा स्रोत दो हैं, आन्तरिक तथा बाह्य। इनका अन्योन्याश्रित सम्बन्ध होता है, जो समय-समय पर मनुष्य की भावना, कल्पना, विचारो तथा कार्य-कलापो को प्रभावित करता है। आन्तरिक प्रेरणा स्रोतो के अन्तर्गत व्यक्तिगत स्वभाव तथा चिंतन महत्वपूर्ण हैं जिनमे प्रेरणा प्राप्त कर मनुष्य बाह्य जगत से अपना सम्पर्क स्थापित कर, उसके विभिन्न रूपो से प्रभावित होता है। बाह्य प्रेरणा स्रोतो मे मनुष्य के बाहरी जीवन म सम्बन्धित घटनाएँ एव समकालीन परिस्थितियाँ अपना विशिष्ठ स्थान रखती हैं। कौशिक' जी की साहित्यिक प्रेरणा के स्रोत ये ही दो क्षेत्र रहे —

१　आन्तरिक प्रेरणा स्रोत—व्यक्तिगत स्वाभाविक एव चारित्रिक गुण।

२　बाह्य प्रेरणा स्रोत —नाटक कम्पनियाँ अन्य भाषाओ का साहित्य, पत्र-पत्रिकाएँ, मित्रमडली, समकालीन आन्दोलन तथा परिस्थितियाँ।

कौशिक' जी निनामक्त, विनोदप्रिय, भावुक तथा स्वाभिमानी व्यक्ति थे। सम्पन्न परिवार के उत्तराधिकारी बनकर आर्थिक चिन्ताओ से मुक्त होने के परिणामस्वरूप बाल्यकाल से ही इनकी प्रकृति ऐसे साँचे मे ढली, जिसमे चिन्ता के लिए

१　'अत्याचार का परिणाम', 'भीष्म (स० १९७८) हिन्दू, विधवा (स० १९७७)।

कोई स्थान न था। इन्होने गृहस्थ की साधारण चिन्ताओ को पत्नी के हाथो में सौंप कर स्वय को उससे मुक्त कर लिया था। इस विषय में 'दुबे जी की डायरी' में स्पष्ट सकेत करते हुए इन्होंने लिखा है—"अपने राम का हिसाब-किताब से सदा असहयोग रहा है। अपने राम ऐसे शुष्क और नीरस विषय के पास भी नही फटकते। यहाँ तक कि घर की आमदनी और खर्च का हिसाब-किताब भी लल्ला की महतारी के जिम्मे है। अपने राम उस ओर से बेफिक्र हैं।"[1]

आर्थिक तथा पारिवारिक चिन्ताओ की सुलभ मुक्ति और सम्पन्नता ने 'कौशिक' जी के स्वभाव को सरलता, भावुकता और विनोदप्रियता प्रदान की। इनका भारी-भरकम शरीर भी इनकी विनोदप्रिय प्रकृति के अनुकूल था। शम्भूनाथ सक्सेना लिखते हैं—"कौशिक' जी की तोंद उनके बदन का विश्लेषण है, जिसका विकास साहित्य मे विजयानन्द चौबे के रूप में हुआ है। सिर के बाल खिचडी हो गये हैं, लेकिन वही राग-रग का जीवन है। उनके जीवन के साथ ही उनका कलाकार भी रस प्रधान है।"[2] इनका अधिकाश साहित्य इसी विनोदशील प्रवृत्ति से प्रभावित है। 'ढपोर शख', खिलावन काका' ,'रेलयात्रा', 'एप्रिल फूल', 'लाला की होली' और 'मुन्शी जी का ब्याह' इत्यादि कहानियों में इस प्रवृत्ति की स्पष्ट झाँकी मिलती है।

'कौशिक' जी के स्वभाव का एक विशेष गुण था स्वाभिमानपूर्ण स्वच्छन्द विचारधारा। अपने स्वाभिमान पर तनिक-सी ठेस लगते ही यह तिलमिला उठते थे। कलाकारोचित सम्मान के प्रति यह जीवन मे सदैव जागरूक रहे तथा चाटुकारिता को घृणास्पद समझा। जीवन मे कभी किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशसा इन्होने नही की जिसके लिए इनकी आत्मा ने गवाही नही दी। स्पष्टवादी होने के कारण यह खरी बात कहते थे और इस बात की चिन्ता नही करते थे कि कोई उनसे प्रसन्न होता है अथवा अप्रसन्न। किसी की अनुचित बात को यह सहन नही करते थे। निम्नलिखित पंक्तियाँ इनकी इसी विशेषता की ओर सकेत करती हैं —

(क) "अपने राम किसी से दबकर रहनेवाले जीव नही।"[3]

(ख) "अपने राम नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते।"[4]

---

१ 'दुबे जी की डायरी'—विजयानन्द दुबे, पृष्ठ ३२।
२ उद्धृत 'हिन्दी कहानी और कहानाकार'—प्रो० वासुदेव पृ० १३१-१३२।
३ 'दुबे जी की चिट्ठियाँ'—विजयानन्द दुबे, पृष्ठ १३।
४ ” ” पृष्ठ १८।

सत्य और उचित के प्रति आग्रह तथा असत्य और अनुचित के प्रति घृणा, इनका स्वभाव था। स्वप्रशसा के प्रति इनका किंचित मात्र भी आकर्षण नही था। अपनी व्यर्थ प्रशसा सुनकर यह खीज उठते थे। अपने जीवन तथा साहित्य के क्षेत्र मे प्रचारात्मक दृष्टिकोण को इन्होने कभी नही अपनाया। इनका साहित्य-सृजन स्वान्त. सुखाय होता था। रामप्रकाश दीक्षित जी के शब्दो मे—"साहित्य साधना उनकी हॉबी थी। अतएव वह प्रचार से बचकर एकान्त मे साहित्यसृजन मे निमग्न रहते थे और पालतू समय मे यार-दोस्तो के साथ हास्य-विनोद और राग-रग मे लीन रहते थे। कार्य-तत्परता और मस्ती उनके व्यक्तित्व के प्रधान लक्षण थे।"[1] धनोपार्जन के उद्देश्य को लेकर इन्होने कभी कोई रचना नही की। स्वभाव की अलमस्तगी के कारण इनकी बहुत सी रचनाएँ यत्र-तत्र बिखरी पड़ी रह गई, जिन्हे सकलित करने का इन्होने कभी प्रयास नही किया। इस विषय मे हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री भगवती चरण वर्मा लिखते हैं,—"कौशिक जी मौजी और अलमस्त कलाकार थे, अपने हितो और ख्याति के प्रति अति लापरवाह, इसका परिणाम यह हुआ कि उनका अधिकाश साहित्य बिखरा हुआ और खोया हुआ सा पडा है।"[2]

स्वच्छन्द प्रकृति के इस कलाकार मे नवीनता के प्रति विशेष आग्रह था। 'होली', 'दिवाली', 'दशहरा, तथा 'जन्माष्टमी' इत्यादि कहानियो मे इन्होने प्राचीन रीति-रिवाजो के परित्याग तथा नवीनता की मांग की है। लेखक के नवीनता के प्रति इस आग्रह ने रूढ़िवादिता पर करारी चोट की है जो इनकी स्वच्छन्द प्रकृति की द्योतक है। उक्त सभी स्वाभाविक आन्तरिक विशेषताओ ने मूल रूप से इनके साहित्य और जीवन को प्रेरणा प्रदान की। साहित्यिक दिशा मे आकृष्ट होकर यह नाटक कम्पनियो के सम्पर्क मे आए और राधेश्याम कथावाचक के साथ कुछ दिनो तक निस्वार्थ भाव से कार्य किया।

रगमञ्चीय नाटककारो तथा कलाकारो पर विशेषतः उर्दू का प्रभाव था। उनके सम्पर्क मे आने के फलस्वरूप 'कौशिक' जी की साहित्यिक प्रतिभा का प्रस्फुटन उर्दू-लेखन के रूप मे हुआ और इन्होंने 'साग़िब' उपनाम से उर्दू मे कविता करनी आरम्भ की। धीरे-धीरे हिन्दी की ओर इनका आकर्षण बढा और सन् १९०९ मे उर्दू-लेखन का परित्याग कर सन् १९११ से हिन्दी में लेखन-कार्य आरम्भ कर दिया।

---

१ 'हिन्दी कहानी'—पृष्ठ १४१।

२ 'कौशिक जी की इक्कीस कहानियाँ'—'दो शब्द'—सम्पादक पीताम्बरनाथ 'कौशिक'।

नाटक-कम्पनियो का वातावरण 'कौशिक' जी जैसे स्वाभिमानी कलाकार के लिए उपयुक्त सिद्ध नहीं हुआ। फलतः इस क्षेत्र का परित्याग कर इन्होंने विशुद्ध साहित्य के क्षेत्र मे पदार्पण किया। विभिन्न भाषाओ के अध्ययन ने इनके स्वतन्त्र-साहित्य-सृजन को नवीन प्रेरणा तथा दिशा प्रदान की। साहित्य की नाटक, उपन्यास आदि अन्य विधाओं में भी इन्होंने रचनाएँ की परन्तु मूल रचना-क्षेत्र कहानी ही रहा। इनकी कहानियाँ कानपुर के स्थानीय साप्ताहिक पत्र 'जीवन' मे प्रकाशित होती थी। दो-तीन लेख 'सरस्वती' पत्रिका मे भी प्रकाशित हुए। उसी समय से इनका परिचय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी से हुआ, जिन्होंने इन्हे बंगला का 'षोडशी' नामक कहानी-संग्रह दिया और उसमे से एक कहानी का अनुवाद करने का आग्रह किया। इन्होंने 'निशीथ' नामक कहानी का अनुवाद किया। इनकी सर्वप्रथम मौलिक रचना 'रक्षा-बन्धन' सन् १९१३ मे 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुई। तत्पश्चात् यह निरंतर हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ में कहानियाँ भेजते रहे। समकालीन पत्र-पत्रिकाओ से 'कौशिक' जी को साहित्य-सृजन की प्रेरणा मिली।

स्वाभाविक प्रवृत्तियो, नाटक-कम्पनियो और पत्र-पत्रिकाओ के अतिरिक्त साहित्य-सृजन के मूल प्रेरणा-स्रोतों मे उन पात्रो का उल्लेख भी महत्त्वपूर्ण है जिनसे प्रभावित होकर 'कौशिक' जी ने उनके चरित्रो को रचनाबद्ध किया। इस क्षेत्र मे इनकी मित्र-मडली का विशेष महत्त्व है, जिसमे ये बैठते थे तथा वार्तालाप मे महत्त्वपूर्ण प्रसंगो से प्रभावित होकर साहित्यिक अभिव्यक्ति की दिशा मे कदम उठाते थे। देवी प्रसाद धवन 'विकल' ने लिखा है—" वह जिन सभा-सोसायटियो, कविसम्मेलनों तथा सामाजिक गोष्ठियो मे जाते थे वहाँ आलोचक की ही दृष्टि लेकर बैठते थे। ''उनकी इस आलोचक दृष्टि ने जो कुछ देखा तथा उनकी लेखनी ने अभिव्यक्त किया वह देश और समाज के लिए निश्चित रूप से कल्याणकारी सिद्ध हुआ।"[1] इस कथन से स्पष्ट है कि इन्हें यथार्थवादी परिस्थितियों से ही विशेष रूप से प्रेरणा प्राप्त हुई, काल्पनिक परिस्थितियों से नहीं। डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव के अनुसार 'कौशिक' जी के युग की कहानियों के"' सृजनकर्त्ताओं की प्रेरणा का स्रोत सामाजिक तथा व्यावहारिक मनोविज्ञान है।[2] पारिवारिक जीवन का 'कौशिक' जी को विशेष ज्ञान था, अतः भारतीय परिवार का इन्होंने जो सर्वांगीण चित्रण किया है वह हिन्दी-साहित्य

---

१ 'दुबे जी की डायरी'——विजयानन्द दुबे, पृष्ठ २ [वे डायरी के पृष्ठ]।
२ 'हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया'—पृष्ठ ६१।

की अमूल्य निधि है। इस चित्रण मे पात्रो की बाह्याकृति और पारिवारिक समस्याओ का मूल्यांकन कलात्मक तथा विचारात्मक दोनो दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण है।

'कौशिक' जी के कथा-साहित्य को समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आन्दोलनों और परिस्थितियो ने भी प्रेरणा प्रदान की। इनके रचना काल मे भारत राजनीतिक, एव सांस्कृतिक क्रान्ति से गुजर रहा था। राजनीतिक क्षेत्र मे भारतीय जन-जीवन ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्षरत था। 'भारतीय-राष्ट्रीय-कांग्रेस' महात्मा गांधी के नेतृत्व मे भारतीय स्वतन्त्रता के मार्ग पर अग्रसर थी। गांधी जी ने असहयोग का अस्त्र लेकर संघर्ष आरम्भ किया, भारतीय जन-जीवन का स्तर उठाने तथा देश की डॉवाडोल आर्थिक स्थिति को सम्भालने के लिए स्वदेशी का प्रचार किया, जिससे भारत की पूंजी विदेशो का जानी बन्द हो। यह शान्ति-पूर्ण संघर्ष था भारत को दासता से मुक्त करवाने का। इसके अतिरिक्त कुछ भारतीय क्रान्तिकारी ढग से स्वतन्त्रता संग्राम मे जुटे थे जिन्होंने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को आतंकित किया और देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणो की आहुति दी।

सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र मे भी इस युग मे विभिन्न प्रकार के आन्दोलन दृष्टिगत होते हैं। भारतीय जन-जीवन को प्राचीन रूढिवादी परम्पराओ से मुक्त करने के निमित्त देश मे कुछ सुधारवादी आन्दोलन हुए, जिनमे से बगाल के सुप्रसिद्ध नेता राजाराममोहनराय द्वारा प्रवर्तित ब्रह्मसमाज का आन्दोलन तथा स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रवर्तित आर्यसमाज का आन्दोलन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ब्रह्मसमाज ने सती प्रथा और बाल-विवाह की समस्याओं को लेकर जन-जीवन को जागरूक किया, जिसके परिणामस्वरूप बगाल के जीवन मे महत्वपूर्ण सामाजिक एव सांस्कृतिक क्रान्ति हुई। आर्यसमाज का प्रभाव उत्तरप्रदेश तथा पजाब में विशेष रूप से हुआ। जिस समय यह प्रभाव राजस्थान की ओर बढा तभी स्वामी जी को विष दे दिया गया और अजमेर मे उनकी मृत्यु हो गई। आर्यसमाज ने मूर्ति-पूजा का खण्डन किया तथा हिन्दू धर्म एव संस्कृति की रक्षा की, स्त्रियो मे शिक्षा का प्रचार किया और अछूतोद्धार आन्दोलन चलाकर हिन्दुओ की स्थिति को सुदृढ किया। हिन्दी के क्षेत्र मे आर्यसमाज का योगदान विशेष महत्वपूर्ण रहा। स्वामी दयानन्द ने गुजराती होकर भी, अपना प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश हिन्दी भाषा मे ही लिखा।

डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा के मतानुसार, "ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, दक्षिणी शिक्षा सोसाइटी, थियोसोफीकल सोसाइटी, रामकृष्ण मिशन, सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी, सोशल सर्विस लीग, सेवा समिति, बालचर संस्था, खालसा दीवान-विवाह बिल, शारदा एक्ट, विधवा पुनर्विवाह तथा अखिल भारतीय

महिला ऐसोसियेशन आदि ने हिन्दी कहानीकारो को यथेष्ट प्रेरणा दी।"[१] इन सुधारवादी सस्थाग्रा तथा राजनीतिक ग्रान्दोलनो में 'कौशिक' जी का साहित्यकार रचना-क्षेत्र म सक्रिय हुआ। आर्यसमाज के विशेष प्रभाव ने इनके सुधारवादी दृष्टिकोण को अत्यधिक सुदृढ़ किया। यथार्थवादी सामाजिक, राजनीतिक एव सास्कृतिक परिस्थितियो से प्रेरित होकर यह कथा-साहित्य मे अवतीर्ण हुए और यथार्थ जीवन की आदर्शमय अभिव्यक्ति की। रूढ़िवादी परम्पराओ और मूर्तिपूजा में अविश्वास रखते हुए इन्होंने सनातन धर्मियो की मूर्तिपूजा तथा उनके तैतीस करोड देवताओ की घोर निन्दा की है —

'आजकल के कुछ लाग, जिनके दिमाग मे ईश्वर की दया से भूसे का अश कुछ आवश्यकता मे अधिक बढ गया है, जिस सनातनधर्म मानते हैं ऐसा गरीब परवर ढागी परवर धम बड़े भाग्य म मिलता है और इसका धर्माचार्य बनने के लिए तो लाखा वर्ष तपस्या करने की आवश्यकता है। इस धर्म ने ईश्वर का टके पसेरी करके छोड दिया है। वाह रे धर्म ! इस धर्म की बदौलत ईश्वर, राम, कृष्ण गली गली जूतियाँ चटकाते घूमते हैं, उन्हें कोई टके को नही पूछता।... इस धर्म क सब अवलम्बी हाथ के कारीगर ठहरे—ईश्वर बनाना उनक बाएँ हाथ का खेल है। जरा सी मिटटी उठाई और ईश्वर तैयार, जरा सा पत्थर उठाया और ईश्वर मौजूद।"[२]

"कौशिक' जी के विचारो, समकालीन जीवन की समस्याओ तथा उनके पात्रो की सजीव झाँकी उनकी रचनाओं मे दृष्टिगत होती है। 'वोटर', 'अहिंसा', 'कम्यूनिस्ट सभा', 'देश भक्ति', 'पेरिस की नर्तकी', 'लीडरी का पेशा', 'पाकिस्तान', 'राशन-काड', 'हिन्दुस्तानी', 'स्वयसेवक', इत्यादि वे कहानियाँ हैं जिनमे राजनीतिक समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है तथा समकालीन राजनीतिक आन्दोलनो से प्रभावित होकर, उनसे सम्बन्धित व्यगपूर्ण और गभीर दोनो प्रकार के चित्र प्रस्तुत किये गए हैं। पात्रो के चरित्र चित्रण मे लेखक ने समकालीन विचारधाराओ को मुखरित किया है।

सामाजिक एव सास्कृतिक जीवन ने 'कौशिक' जी के कहानी-साहित्य को विशेष रूप से प्रेरणा प्रदान की। इनका युग समाजसुधार का युग था, और 'कौशिक' जी अपने युग की इसी प्रवृत्ति से ही अधिक प्रभावित हुए। राजनीतिक उथल-पुथल तथा

---

१ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन' पृष्ठ—१३६-१४०।
२ 'दुबे जी की चिटिठयाँ'—पृष्ठ २३ २४।

आन्दोलनों का चित्रण इन्होंने विशेषत 'दुबे जी की डायरी' और 'दुबे जी की चिट्ठियाँ' मे किया है। कथा साहित्य मे अधिकांशत पारिवारिक जीवन की इतनी सजीव झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं कि उनके अध्ययन से तत्कालीन सामाजिक एव सास्कृतिक जीवन साकार हो उठता है। 'अबला' 'आत्मग्लानि', 'आत्मोत्सर्ग', 'ईश्वर का डर', 'उद्धार', 'खोटा बेटा', 'गरीब हृदय', 'गुण-ग्राहकता', 'चौबे से दुबे', 'यौवन की आँधी', 'रक्षा बन्धन', 'ताई', 'प्रकृति', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'विधवा', 'प्रसाद', 'पथ निर्देश', 'धर्म का धक्का', 'भक्त', 'भवन की टर', 'सुधार' इत्यादि कहानियो मे 'कौशिक' जी की समकालीन सामाजिक एव सास्कृतिक चेतना के दर्शन होते हैं।

'कौशिक' जी की कहानियो मे व्यग्यपूर्ण साहित्य का विशेष महत्त्व है, जिसमे सामाजिक कुरीतियो पर करारी चोट की गई है, रूढिवादिता, अन्धविश्वास तथा पोंगापथियो की कलात्मक ढग से पोल खोली गई है।

समकालीन परिस्थितियो से प्रेरणा प्राप्त होने के फलस्वरूप समकालीन विचारधाराओ का प्रभाव 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण साहित्य मे दृष्टिगोचर होता है। यह अपने युग के प्रत्येक आन्दोलन के प्रति सजग थे। इस कथन की सत्यता इनकी कुछ कहानियो की समस्याओ तथा उनके पात्रो के चित्रण से स्पष्ट हो जाती है।

अपने राजनीतिक आन्दोलनो से प्रभावित होकर जो कहानियाँ लिखी उनमें 'लीडरी का पेशा'[1] कहानी राजनीतिक नेताओ के जीवन का चित्र उपस्थित करती है तथा इसमे उनकी नेतागिरी पर तीखा व्यग किया गया है। कहानी का प्रमुख पात्र प० उमादत्त शुक्ल ऐसे ही नेताओं का प्रतिनिधि बनकर आया है जो लीडरी को पेशा समझकर जनता मे अपनी धाक जमाने तथा आनन्द करने के प्रयत्न मे लगा रहता है। उसकी स्थिति का वर्णन 'कौशिक' जी ने इस प्रकार किया है, "शुक्ल जी ने शहर के देशभक्तो मे एक अच्छा स्थान प्राप्त कर लिया। शहर के कुछ श्रीमानो पर शुक्ल जी की अच्छी धाक जम गई। शुक्ल जी अब बाहर की सभाओ और सम्मेलनो मे भी जाने लगे। कांग्रेस को भी अपने चरण रज से पवित्र करने लगे। साराश यह है कि जिस प्रकार आप शिक्षा मे अडर ग्रेजुएट थे, उसी प्रकार अपनी समझ मे नेतृत्व मे भी अडर ग्रेजुएट हो गए।"

'वोटर'[2] कहानी मे अधिक धन के बल पर वोट क्रय कर कौंसिल का मेम्बर

---

१ 'चित्रशाला' [कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ ५६ ६४।
२ 'पथ—निर्देश' [कहानी सग्रह] " पृष्ठ ११२-१३०।

बनकर नाम कमाने के इच्छुक नेताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले राजनारायण का यथार्थ चित्र उपस्थित किया गया है, जो अशिक्षित तथा अयोग्य होने पर भी धन के बल पर वोट खरीदना चाहता है।

'पाकिस्तान'[1] कहानी देश में फैली उस समय की हलचल का चित्र प्रस्तुत करती है जब राजनीतिक क्षेत्र में पाकिस्तान बनने का प्रश्न ज्वलन्त था। "गाँधी जी ने जिन्ना साहब का पाकिस्तान मंजूर कर लिया।" यह पंक्ति इसी सत्य की ओर संकेत करती है। यह कहानी उस युग के कुछ व्यक्तियों में पाकिस्तान बनने की स्वीकृति से उत्पन्न असन्तोष की भावना को व्यक्त करती है। कहानी के पात्र लखनऊ के अफीमची हैं, जिनका कहना है, "हम तो नापाकिस्तान में ही भले हैं।... हिन्दू कुछ हमें खा तो जायेंगे ही नहीं। बहुत से हिन्दू हमारे दोस्त और हमदर्द हैं।"

'संशोधन'[2] शीर्षक कहानी में 'कौशिक' जी ने इस युग में उठने वाली असहयोग आन्दोलन की लहर के प्रभाव से देशभक्ति के क्षणिक आवेश में आकर देशभक्त बनने वाले व्यक्तियों के जीवन पर प्रकाश डाला है, जो आवश्यकता पड़ने पर जनता से प्राप्त धन का उपयोग करने में भी नहीं चूकते। इसका प्रमुख पात्र पंडित राजनारायण यह सोचकर अपने मन को संतुष्ट करता है, "जब हम जनता की सेवा करते हैं तब हमें उसके धन के कुछ अंश को अपने व्यय में लाने का नैतिक अधिकार है।"

'पेरिस की नर्तकी'[3] कहानी में फ्रांस की राजनीतिक पराजय के कारण पर दृष्टि डाली गई है।

सामाजिक तथा सांस्कृतिक सुधारवादी आन्दोलनों के प्रभाव से रचित कहानियों में सामाजिक रीति रिवाजों और पारिवारिक समस्याओं पर प्रकाश डाला है।

विधवा-विवाह के आन्दोलन का प्रभाव 'युग धर्म'[4] कहानी पर मिलता है, जिसका एक पात्र आनन्दीप्रसाद अपने सम्बन्धियों की सम्मति के बिना ही, अपने मित्र मनोहरलाल की विधवा बहन कमला से विवाह करने का साहस करता है तथा कहता है, "मनुष्य को युग-धर्म के साथ चलना चाहिए।"

---

१ एप्रिल फूल' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १०३-१०६
२ 'कल्लोल' „ „ ८५-१०१।
३ 'पेरिस की नर्तकी' „ „ ८७ ९९।
४ 'एप्रिलफूल' „ „ ११०-१२८।

'अबला'[1] कहानी में स्त्री को अबला कहने की धारणा पर व्यंग करते हुए यह प्रमाणित करने का प्रयास किया गया है कि स्त्री अबला नहीं होती। 'बुद्धि-बल'[2] कहानी मे ढोंगी सन्यासी का यथार्थ चित्र उपस्थित किया गया है। 'उद्धार'[3] कहानी मे निर्धनो का शोषण करने वाले पूँजीपति वर्ग की प्रवृत्तियों का स्पष्ट चित्रण किया गया है। 'ढपोरशख'[4] म हिन्दू धर्म के आन्तरिक खोखलेपन पर विशेष रूप से प्रकाश डाला है। बाह्य आडम्बरो एव अहकारी पण्डितो के पाखण्डो का चित्रण प्रस्तुत किया गया हैं।

निष्कर्षत 'कौशिक' जी ने जिस सामाजिक राजनीतिक तथा सास्कृतिक जीवन से प्रेरणा प्राप्त की उसकी स्पष्ट झाँकी इनके साहित्य मे मिलती है। इनके जीवन की सक्षिप्त झाँकी, विचार तथा साहित्यिक प्रेरणा-स्रोता और उनसे सम्बन्धित समकालीन परस्थितियों एव आन्दोलनो के प्रभावा की अभिव्यक्ति का अनुशीलन करने के पश्चात् जिस स्तर के साहित्य की कल्पना की जा सकती है उसमे यह साहित्यकार पूर्णरूपेण सफल हुआ। इनका कथा साहित्य अपने युग का सजीव चित्र है, जिसमे हर चेतना निखरकर सामने आई है।

---

१ 'प्रतिशोध' [क० स०]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १२१ १३७।
२ 'अप्रिल फूल' ,, ,, ४२ ४८।
३ 'चित्रशाला' ,, ,, २३ ४०।
४ 'पेरिस की नर्तकी' ,, ,, १४५-१५५।

द्वितीय अध्याय

'कौशिक'-पूर्व हिन्दी-कथा-साहित्य

कथा कहना तथा सुनना मानव की स्वाभाविक विशेषता है। इसी प्रवृत्ति ने कथा-साहित्य को जन्म दिया। प्राचीन भारतीय साहित्य मे कथाओ का प्रचलन आदिम काल से दृष्टिगोचर होता है। ये कथाएँ प्रमुखत घटनाप्रधान तथा मार्मिक तत्वो से युक्त होती थी। कहानी की परम्परा वैदिक-संस्कृत, संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश आदि में वेद, उपनिषदो, पुराणो इत्यादि मे से होती हुई चारण-काल और गाथा-काल तक विकसित होती चली आई। इस युग तक का कथा-साहित्य अपना ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। पौराणिक आख्यानो पर आधारित इस कथा-साहित्य मे कल्पना की प्रचुरता है तथा कहानी का उद्देश्य केवल मनोरंजन रहा है। बीच मे कहीं-कहीं उपदेशात्मक प्रवृत्ति प्रधान हो गई है तथा मनोरंजन गौण हो गया है। डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव के शब्दो मे—"पुरानी मौखिक कहानी का आडम्बर और कृत्रिम लाक्षणिक भाषा, इस युग की कहानी मे, स्वाभाविकता के विकास मे बाधक हुई है। इसी अपरिपक्वता को लक्ष्य कर इस काल की कहानी को "जन्मकाल" या "बाल्यकाल" का साहित्य या 'शैशवकाल का साहित्य' कहा गया है।"[1]

भारतेन्दु-युग से पूर्व कहानी के तत्वों का धीरे-धीरे विकास होता रहा। कहानी-रचना का माध्यम पद्य था, धीरे-धीरे गद्य के विकास के साथ-साथ गद्य मे कहानियो की रचना की जाने लगी। इस युग के हिन्दी-गद्य-कथा-साहित्य के क्षेत्र में लल्लूलाल के 'प्रेमसागर' (१८०३-१८०९) सदलमिश्र के 'नासिकेतोपाख्यान, (१८०३ ई०) तथा सैयद इशाअल्लाखाँ को 'रानी केतकी की कहानी' (स० १८५५-१८६०) का विशेष महत्त्व है। 'प्रेमसागर' मे भागवत के प्रथम स्कन्ध पर आधारित कृष्ण-चरित्र का पौराणिक दृष्टि से वर्णन किया गया है। 'नासिकेतोपाख्यान' संस्कृत के नासिकेतोपाख्यान से अनूदित रचना मानी जाती है, जिसमे चन्द्रावली की कथा का वर्णन है। ये दोनो रचनाएँ पौराणिक शैली पर लिखी गई। 'रानी केतकी की

---

१. 'हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया'-पृष्ट ५६।

कहानी' १९ वीं शताब्दी की वह सर्वप्रथम रचना है, जिसे हिन्दी के अधिकांश आलोचकों ने हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी होने का श्रेय प्रदान किया है। इसकी कथा-वस्तु किसी पौराणिक रचना पर आधारित न होकर लेखक की मौलिक कल्पना से उद्भूत है, ऐसी विद्वानों की मान्यता है।[1] इस कहानी का दूसरा नाम 'उदयभान चरित' है।

हिन्दी-कथा-साहित्य का वास्तविक आविर्भाव भारतेन्दु युग में हुआ। इस युग की कहानियाँ समय-समय पर अनेक समकालीन पत्र पत्रिकाओं 'कविवचन सुधा' (सन् १८६७), 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' (सन् १८७३), 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका (सन् १८७४), 'हिन्दी प्रदीप' (सन् १८७७), 'ब्राह्मण' (सन् १८८०), 'सारसुधा निधि' तथा 'भारत-मित्र' (सन् १८७७) आदि में प्रकाशित होती रहीं। राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द की 'राजा भोज का सपना', राधाचरण गोस्वामी की 'यमलोक की यात्रा', भारतेन्दु की 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' आदि इस युग की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ हैं, जिनकी रचना मौलिक कथानकों के आधार पर की गई है। स्वप्नलोक की काल्पनिक भित्ति पर रचित इन कहानियों में उपदेशात्मकता के स्थान पर तीखे व्यंग्य का समावेश हुआ है। इस युग की कहानी में आगामी कथा साहित्य के परिवर्तन का आभास मिलता है तथा आधुनिक हिन्दी-कहानी की पृष्ठभूमि के रूप में इस कथा-साहित्य का महत्त्व सर्वोपरि है। इस काल में हिन्दी-कहानी की रूपरेखा निश्चित हो चली थी। अत "हिन्दी कहानी को समुचित शैली की ओर प्रेरित करने का श्रेय भारतेन्दु-युग को अवश्य दिया जाना चाहिए।"[2]

आधुनिक कथा-साहित्य का, जिसका प्रचलन आरम्भ में अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में दृष्टिगोचर होता है, अनुकरण गल्प-विधा के क्षेत्र में बंगभाषी साहित्यकारों ने किया। १९०० ई० में निकलने वाली 'सरस्वती' पत्रिका का हिन्दी-कहानी के उद्भव और विकास की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में "बीसवीं शताब्दी में जब 'सरस्वती' का प्रकाशन हुआ तभी वास्तविक अर्थों में कहानी लिखना शुरू हुआ। सन् १९०० से १९१० तक का काल हिन्दी-कहानियों

---

१. 'रानी केतकी की कहानी' की कथावस्तु का कोई प्राचीन लिखित आधार नहीं है। अत, वह पूर्ण मौलिक रचना मानी जाती है।"—'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन', डा० *ब्रह्मदत्त शर्मा, पृष्ठ ७९।*

२. 'हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ'—डॉ० गोविन्दराम शर्मा, पृष्ठ ६७०-६७१।

का प्रयोगकाल कहा जा सकता है।"[1] इसमें दो प्रकार की कहानियों की रचना हुई—प्रथम अनूदित तथा दूसरी मौलिक कहानियाँ। प्रारम्भ मे अधिकांशत अनूदित कहानियों की रचना हुई जिनमे अत्यन्त मार्मिक तथा भावव्यञ्जक खण्डचित्रो की अवतारणा हुई। राधाकृष्णदास की 'मिम्बेलिन', पार्वतीनन्दन की 'बिजुली' और 'मेरी चम्पा', सूर्यनारायण दीक्षित की शेक्सपियर-कृत 'हैमलेट' नाटक की अनूदित कहानी, श्री चतुर्वेदी की 'भूल भुलैयाँ' आदि कहानियाँ अंग्रेजी से, जगन्नाथ त्रिपाठी की 'मुक्ति का उपाय', गदाधर सिंह की 'कादम्बरी', सूर्यनारायण दीक्षित की 'चन्द्रहास का अद्भुत उपाख्यान' आदि संस्कृत से तथा पार्वतीनन्दन की 'राजटीका', बंगमहिला की 'कुम्भ मे छोटी बहू', भट्टाचार्य की 'राजपूतनी' आदि कहानियाँ बंगला से अनूदित होकर समय समय पर 'सरस्वती' पत्रिका मे प्रकाशित होती रही।

उक्त अनूदित कहानियो ने हिन्दी मे मौलिक कहानी-कला के आविर्भाव मे प्रेरणा प्रदान की, जिसके परिणाम स्वरूप इस युग मे अनेक मौलिक कहानियो की रचना हुई। १६०० ई० में किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' कहानी सरस्वती के प्रथम भाग मे प्रकाशित हुई, जिस पर कुछ विद्वानो ने शेक्सपियर के 'टेम्पेस्ट' नाटक का प्रभाव स्वीकार किया है। डॉ० सुरेश सिनहा ने इसे प्रथम मौलिक कहानी स्वीकार किया है तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार "यदि 'इन्दुमती' किसी बंगला कहानी की छाया नही है तो हिन्दी की यही पहली मौलिक कहानी ठहरती है।"[2] १६०१ मे लाला पार्वतीनन्दन कृत 'प्रेम का फुहारा' सन् १६०२ में मास्टर भगवान्दास कृत 'प्लेग की चुड़ैल', सन् १६०३ मे गिरिजादत्त वाजपेयी-कृत 'पति का प्रेम' तथा 'पंडित और पंडितानी', आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-कृत 'ग्यारह वर्ष का समय', सन् १६०४ मे महावीर प्रसाद द्विवेदी की 'स्वर्ग की झलक', सन् १६०५ में निजामशाह कृत 'सुअर का शिकार', सन् १६०७ मे बंग महिला की 'दुलाई वाली' तथा सन् १६०६ मे वृन्दावनलाल वर्मा की 'राखीबन्द भाई', मैथिलीशरण गुप्त की 'नकली किला', विद्यानाथ शर्मा की 'विद्या बिहार, आदि प्रसिद्ध मौलिक कहानियाँ 'सरस्वती मे प्रकाशित हुई।

'कौशिक' जी ने सन् १६११ से हिन्दी मे रचना करनी प्रारम्भ की, इसलिए सन् १६१० तक का हिन्दी-कथा साहित्य इनसे 'पूर्वकालीन हिन्दी कथा-साहित्य'

---

१ 'हिन्दी साहित्य'—पृष्ठ ४०३-४२४।

२ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—पृष्ठ ५०४।

के अन्तर्गत आता है। भारतेन्दु-युग तक हिन्दी मे जिन कहानियो की रचना हुई उनका सम्बन्ध जीवन से बहुत कम तथा काल्पनिक जगत से अधिक है। आधुनिक युग मे कहानी-कला के जो तत्व स्वीकार किये गए उनका समावेश उन कहानियो मे न हो सका। ये कहानियाँ तिलस्म, जादू तथा कुतूहलपूर्ण विषयों से सम्बद्ध हैं तथा आकार मे लम्बी हैं। उनकी रचना वर्णात्मक शैली मे हुई है तथा ब्रज, पूर्वी हिन्दी और खड़ी बोली की गद्य-पद्यमय भाषा का प्रयोग किया गया है। गद्य का रूप अत्यन्त अव्यवस्थित तथा अपरिमार्जित है। अत भारतेन्दु-युग मे कहानी-कला की उत्पत्ति की दिशा में जो भी प्रत्यक्ष तथा परोक्ष प्रयत्न और प्रयोग किये गये उन समस्त प्रयत्नों एव गद्यशैलियो मे हिन्दी कहानी का कोई स्पष्ट तथा निश्चित रूप नहीं बन सका। हिन्दी-कहानी के आविर्भाव तथा आगामी कहानीकारों के मार्ग -प्रेरक के रूप मे इस कथा-साहित्य का महत्त्व निस्सन्देह स्वीकार्य है।

द्विवेदी-युग में जिस कथा-साहित्य की रचना हुई वह हिन्दी-कहानियों का प्रयोग काल था। इस युग की कहानियो का प्रधान लक्ष्य मनोरजन था, जिसके लिए अनेक प्रकार की कुतूहलवर्धक घटनाओं को गुम्फित किया जाता था। अग्रेजी से अनूदित कहानियो की रचना से "अग्रेजी कहानी-कला का हिन्दी कहानीकारो पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा है। उन्होने अग्रेजी कहानियो की प्राय सब विशेषताओं को स्वीकार किया है।"[१] बगला से प्रेरित कहानियाँ सक्षिप्त आकार की हैं, जिनमें कहानीकारो का व्यक्तित्व भी बीच-बीच मे उभरता रहता है। इनमे तत्सम प्रधान मुहावरो से युक्त भाषा का प्रयोग किया गया। इस युग की मौलिक कहानियाँ विषय की दृष्टि से मुख्यत. पाँच प्रकार की हैं —(१) प्रेम तथा मनोरजन प्रधान कहानियाँ, (२) ऐतिहासिक एव पौराणिक कहानियाँ, (३) जासूसी और साहसप्रधान-कहानियाँ, ४) सामाजिक कहानियाँ, (५) पद्य-बद्ध उपदेशात्मक कहानियाँ। प्रेम प्रधान कहानियो मे प्राचीन प्रेम कथाओ की परम्परा का आभास मिलता है, ऐतिहासिक और पौराणिक कहानियाँ घटना प्रधान हैं तथा कल्पना का भी समुचित प्रयोग इनमे किया गया है। जासूसी एव साहसप्रधान कहानियाँ रचनाकला की दृष्टि से साधारण कोटि की हैं, केवल पाठको के मनोरजन के उद्देश्य को लेकर लिखी गई हैं। सामाजिक कहानियो मे जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का कुछ प्रयत्न मिलता है। उपदेशप्रधान कहानियो मे उपदेशात्मक प्रवृत्ति की प्रधानता रही है।

प्रयोगकालीन कहानियों का प्रधान उद्देश्य मनोरंजन रहा तथा इनकी रचना अन्य पुरुष की वर्णनात्मक शैली में हुई। हिन्दी कथा-शिल्प की दृष्टि से 'सरस्वती' पत्रिका के प्रथम दो वर्षों में कहानी के कुछ प्रारम्भिक प्रयोगों का विशेष महत्त्व है। 'इन्दुमती' कहानी की रचना अन्यपुरुष तथा वर्णनात्मक शैली में हुई तथा केशव-प्रसाद सिंह की 'आपत्तियों का पर्वत' कहानी की रचना प्रथम पुरुष की शैली में हुई। "इसमें लेखक ने स्वप्न को एक अभिव्यक्ति का साधन मानकर कहानी के मनोरंजन को सामने लाने का प्रयत्न किया है।"[1] इस कहानी में कौतूहल वृत्ति की प्रधानता है। इनकी यात्रा विवरण पर आधारित कहानी 'चन्द्रलोक की यात्रा' कल्पित विषय पर निर्मित मनोरञ्जन-तत्वों से परिपूर्ण है, कहानी के तत्व भी सफलता-पूर्वक आए हैं। इन कहानियों में काल्पनिक तथा यथार्थ घटनाओं का सुन्दर सामञ्जस्य स्थापित किया गया है। डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा के शब्दों में—"इनमें कहीं-कहीं यथार्थ जगत के निकट जाने का प्रयास किया गया है।"[2] समाज की गम्भीर तथा महत्त्वपूर्ण समस्याओं की ओर कहानीकारों का ध्यान नहीं गया, क्योंकि इनका प्रधान लक्ष्य पाठकों के समक्ष मनोरंजन की सामग्री उपस्थित करना रहा है। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के उद्घाटन की ओर इनका ध्यान बहुत कम गया है। सामाजिक जीवन के पारिवारिक पक्ष की अभिव्यक्ति का कुछ प्रयास इस युग के कथा-साहित्य में मिलता है, जिसमें आदर्शवाद की रक्षा की ओर कहानीकारों का विशेष ध्यान रहा है।

कहानी का मानव-जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। मनुष्य का जीवन स्वयं एक कहानी है, जिसका प्रारम्भ उसके जन्म से तथा पर्यवसान मृत्यु में होता है। 'कौशिक'-पूर्व-युगीन कहानी का मानव-जीवन के साथ कोई विशेष सम्बन्ध नहीं हो पाया था। इस क्षेत्र में जो भी प्रयास किये गये वे असन्तोषजनक तथा निराशा-पूर्ण रहे। उनके द्वारा एक प्रकार की व्याकुलता तथा मजबूरी का आभास मिलता है जो आगे जाकर क्रियात्मक रूप में व्यक्त हुआ। इस युग में हिन्दी साहित्यकारों के समक्ष सर्वप्रमुख समस्या कहानियों के हेतु उपयुक्त वातावरण एवं पाठक-वर्ग तैयार करने की थी, इसलिए उन्होंने रोमांचकारी, कौतूहलपूर्ण तथा आकर्षक बलात्म प्रसंगों को ही अपने कथा साहित्य में स्थान दिया। हिन्दी कथा-साहित्य के मूल

---

१ 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास',—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ ५१

२ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन' पृष्ठ १३२।

सुधारात्मक प्रवृत्ति सक्रिय थी। आगामी कहानीकारों—किशोरीलाल गोस्वामी, केशवप्रसाद मिश्र, रामचन्द्र शुक्ल, बग महिला, भगवानदास आदि में समयुगीन समस्याओं के चित्रण तथा उनके समाधान प्रस्तुत करने की व्यग्रता थी और उन्होंने समाज या धर्म को सुधारने की चेष्टा में ही कहानियों की रचना की, "पर चूँकि यह कहानियों का प्रारम्भिक युग था और हिन्दी कहानियों के भविष्य की उज्ज्वल पीठिका तैयार हो रही थी, इसलिए ये प्रयत्न अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध न हो सके।"[1] वस्तुत. आगामी कथा-साहित्य की पूर्वपीठिका तथा प्रेरणा-स्रोत के रूप में इस कथा-साहित्य का अपना विशेष महत्त्व है।

"सन १६११ मे 'इदु' का प्रकाशन हुआ, जिसमे जयशकर प्रसाद की सभवत प्रथम कहानी 'ग्राम' प्रकाशित हुई। श्री गगाप्रसाद श्रीवास्तव की प्रथम हास्य रस की कहानी 'पिकनिक' भी इसी साल प्रकाशित हुई और इन्ही दिनो 'भारत मित्र' मे प० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की प्रथम कहानी 'सुखमय जीवन' भी छपी।[2]" प्रसाद अपने कथा-साहित्य मे एक भिन्न भावमूलक आदर्शवादी विचारधारा को लेकर चले। इनके सभी कथारूपो मे कल्पनातत्व की प्रधानता है, इसी वृत्ति के कारण इनकी प्राय सभी कहानियाँ भावप्रधान हैं, जिनके विषय समाज, इतिहास तथा कल्पना तीनो धरातलो से ग्रहण किये गए हैं। प्रारम्भिक 'ग्राम' आदि कहानियो मे कठोर यथार्थ का चित्रण करते हुए, सुधारवादी भावना को व्यक्त किया है। ऐतिहासिक कहानियो मे भारतीय सस्कृति के आदर्श तथा स्वर्णिम अतीत की प्रतिष्ठा करते हुए करुणा, बलिदान और उत्सर्ग की भावाभिव्यक्तियो से अतीत की धार्मिक, दार्शनिक और सामाजिक मान्यताओ को चुनौती दी है।[3] 'आकाशदीप', 'इन्द्रजाल', 'पुरस्कार', 'सालवती', 'नूरी', 'देवरथ' आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं, जिनमे प्रेमपूरक भावनाओ की प्रधानता है। भावपक्ष की दृष्टि से इनकी कहानियाँ आनन्द और सौन्दर्य से परिपूरित, काल्पनिक तथा आदर्शोन्मुखी है। श्री गगाप्रसाद श्रीवास्तव हास्यरस की कहानियो की एक अन्य धारा लेकर चले। चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की कहानियो की सख्या कम है, फिर भी इनका हिन्दी साहित्य मे विशेष स्थान है। 'सुखमय जीवन', 'बुद्धू का काटा' तथा 'उसने कहा था' इनकी तीन प्रसिद्ध कहानियाँ

---

१. 'हिन्दी कहानी उद्भव और विकास', डा० सुरेश सिनहा, पृष्ठ १८५।
२. 'हिन्दी साहित्य', डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ, ४२५।
३. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास', डॉ० लक्ष्मीनारायणलाल, पृष्ठ ७२।

हैं जो सामाजिक चेतना से अनुप्राणित हैं। इनमे व्यक्ति, समाज एव वर्ग, तीनो के आदर्शों का चित्रण किया गया है। 'गुलेरी' जी अपने कथा-साहित्य मे भावमूलक आदर्शवादी धारा को लेकर चले। सन् १९१२ मे प्रसाद की 'रसिया बालम' कहानी प्रकाशित हुई तथा इसके पश्चात् ज्वालाप्रसाद शर्मा की 'विधवा' तथा 'तस्कर' कहानियाँ प्रकाशित हुईं। विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' की प्रथम कहानी 'रक्षा बन्धन' सन् १९१३ मे सरस्वती मे प्रकाशित हुई।[1] इन्होंने अपने कथा-साहित्य मे समाज-सुधारवादी प्रवृत्ति को अपनाते हुए जीवन की वास्तविक झाँकी प्रस्तुत की। प्रेमचन्द हिन्दी कहानी-कला के क्षेत्र मे सन् १९१६ मे अवतीर्ण हुए। वैसे उर्दू कहानी-कला के क्षेत्र मे इन्होने प्रसाद तथा 'कौशिक' से पूर्व सन् १९०७ मे ही प्रवेश कर लिया था। १९१६ ई० मे इनकी प्रथम हिन्दी कहानी 'पचपरमेश्वर' प्रकाशित हुई।[2] इससे पूर्व उर्दू मे इन्होंने लगभग १७८ कहानियो की रचना की, जो समय समय पर उर्दू की प्रसिद्ध पत्रिका 'जमाना' मे छपती रही। डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा के अनुसार इनकी प्रथम हिन्दी कहानी 'सौत' है, जो सन् १९१५ मे 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुई। 'कौशिक' जी की प्रथम कहानी 'रक्षाबन्धन' अक्टूबर "१९१६ (भाग १७ स० ४ पृष्ठ २१५) मे 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुई।[3] इस दृष्टि से प्रेमचन्द ने 'कौशिक' से पूर्व हिन्दी कथा साहित्य म प्रवेश किया। प्रो० वासुदेव के अनुसार सन् १९१२ में 'कौशिक' जी की पहली मौलिक कहानी 'रक्षाबन्धन' 'सरस्वती' मे प्रकाशित हुई · हिन्दी ससार म 'कौशिक' जी प्रेमचन्द जी से पहले आये।"[4] इस विषय पर विद्वानो मे मतभेद है। अत इस विवाद मे न पडकर यह स्वीकार कर लेना उचित होगा कि १९१० के पश्चात् से हिन्दी-कहानियो का विकास-काल प्रारम्भ होता है, जिसके प्रतिनिधि कहानीकार चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', जयशकर प्रसाद, प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' तथा जी० पी० श्रीवास्तव आदि है, जिनका कथा साहित्य विकास काल के अन्तर्गत आता है। इस युग म हिन्दी कहानियों की चार प्रमुख धाराएँ चलीं—(१) समाज सुधारवादी कहानियो की धारा, (२) भाव प्रधान आदर्शवादी कहानियो की धारा, (३) हास्य रस की कहानिया की धारा तथा (४) भावमूलक यथार्थवादी कहानियो

---

१ हिन्दी साहित्य'—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ ४२५।
२, 'हिन्दी साहित्य'—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ४२५।
३ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन', पृ० १८४-२१६।
४ 'हिन्दी कहानी और कहानीकार', पृ० १११-११४।

की धारा । प्रेमचन्द के कथा-साहित्य मे आदर्शोन्मुख यथार्थवादी प्रवृत्ति की प्रधानता रही ।

'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिन्दी कथा-साहित्य मे चरित्र-प्रधान कहानियो की सृष्टि करते हुए अपने पूर्वयुगीन कथा-साहित्य के अभाव को पूर्ण किया, अपने युग के प्रमुख समाज-सुधारवादी एव राजनीतिक आन्दोलनो को कथा-साहित्य मे अभिव्यक्ति दी और मानव-जीवन के साथ सम्पर्क स्थापित करते हुए समाज के यथार्थ स्वरूप का उपस्थित किया । इनका पूर्वयुगीन कथा-साहित्य मानव जीवन तथा उसकी समस्याओ से दूर कल्पना लोक की वस्तु है, जिसमे कही-कही सामाजिक जीवन की छाया प्रतिभासित हो उठती है । 'कौशिक' जी ने जीवन मे प्रवेश कर यथार्थ का निर्दर्शन किया और अनेको सामाजिक तथा पारिवारिक समस्याओ पर प्रकाश डालते हुए उनका समाधान प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया । शिल्प की दृष्टि से भी इन्होंने कई महत्वपूर्ण प्रयत्न किये, हिन्दी कहानी-कला मे सवादात्मक शैली का सूत्रपात किया तथा पात्रो के चरित्र-चित्रण पर विशेष बल दिया । शुद्ध मनोरजन के स्थान पर समाज-सुधारात्मक आदर्शवादी लक्ष्य को लेकर इन्होने उच्च उद्देश्य-प्रधान कथा-साहित्य की रचना की ।

कहानी की लोकप्रियता

कहानी जीवन की वास्तविकता को प्रतिबिम्बित करके मानव-जीवन के किसी सघर्षमय सवेदनात्मक पक्ष का उद्घाटन करती हुई जीवन के प्रगतिशील

प्राप्त न कर सकी। उस युग मे छोटी-छोटी १०-१२ पृष्ठो की रचनाओ को स्वय लेखको के द्वारा उपन्यास की सज्ञा दी जाती थी। इसका 'कारण एकमात्र यही था कि या तो 'कहानी' का प्रवेश साहित्यिक ग्रथों मे नही हो पाया था और यदि हो भी गया था, तो वह बहुत लोकप्रिय न हो सका था।"[1]

'कौशिक' जी के युग तक आते-आते उपन्यास और कहानी हिन्दी-गद्य-साहित्य का प्रतिनिधित्व करने लगे। समकालीन प्रतिभासम्पन्न कलाकारो ने कथा साहित्य के माध्यम से साहित्य के नूतन विकास क्षेत्र मे जो नवीन रचनाएँ प्रस्तुत की उनमे समाज का स्वर मुखरित हो उठा। कथा साहित्य मे शैली तथा कथानक, विचार एव भावना, सभी क्षेत्रो मे कहानी के नवीनतम चित्र प्रस्तुत किये गये। ऐतिहासिक, सामाजिक और सास्कृतिक पात्रो तथा घटनाओ का चित्रण किया गया। इतिवृत्ति एव घटनाप्रधान कहानियो के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण एव अन्तर्बाह्य जगत के सघर्षों को लेकर कहानियो की रचना की गई। वस्तुत कथा-साहित्य ने मानव-जीवन का सर्वांगीण चित्रण प्रस्तुत कर अधिकाधिक पाठको को अपनी ओर आकृष्ट किया।

"द्विवेदी-युग मे 'सरस्वती' मे अनेक लेखको की कहानियो को स्थान मिलने लगा और धीरे-धीरे लेखको एव पाठको का ध्यान साहित्य के अन्य रूपो की अपेक्षा कहानी की ओर अधिक आकृष्ट होने लगा।"[2] पाठको की कहानी पढने की बढती हुई माँग की पूर्ति के लिए काशी से 'इन्दु' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसके पश्चात् 'हिन्दी-गल्प माला' नामक शुद्ध कहानी मासिक पत्र प्रकाशित हुआ। कथा-साहित्य को लोकप्रिय बनाने तथा कहानियो के अनेक रूपो एव शैलियो के विकास मे 'गल्प-माला' का कार्य सराहनीय है। वैसे इन सभी पत्रिकाओ 'सरस्वती', 'इन्दु', 'जीवन' तथा 'हिन्दी प्रदीप' आदि मे कथा-साहित्य को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ। कहानी-विधा को लोक प्रिय बनाने मे इनका योगदान महत्वपूर्ण रहा, जिसके फलस्वरूप अनेक साहित्यकारो ने कहानी लेखन की ओर आकृष्ट होकर अपनी भावनाओं, कल्पनाओ तथा विचारो को कहानी के माध्यम से मूर्त रूप देने तथा कलात्मक चित्र प्रस्तुत करने की दिशा मे नवीनतम शैलीगत प्रयोग प्रस्तुत किये, जिससे साहित्य की इस विधा ने अत्यन्त चित्ताकर्षक बनकर लोकप्रियता प्राप्त की।

---

१. 'हिन्दी-कहानी : उद्भव और विकास'—डॉ० सुरेश सिनहा, पृ० १७१।

२. 'हिन्दी-साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ'—डॉ० गोविन्द राम शर्मा, पृ० ३७२।

की धारा। प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में आदर्शोन्मुख यथार्थवादी प्रवृत्ति की प्रधानता रही।

'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिन्दी कथा-साहित्य मे चरित्र प्रधान कहानियो की सृष्टि करते हुए अपने पूर्वयुगीन कथा-साहित्य के अभाव को पूर्ण किया, अपने युग के प्रमुख समाज-सुधारवादी एव राजनीतिक आन्दोलनो को कथा साहित्य मे अभिव्यक्ति दी और मानव-जीवन के साथ सम्पर्क स्थापित करते हुए समाज के यथार्थ स्वरूप को उपस्थित किया। इनका पूर्वयुगीन कथा-साहित्य मानव जीवन तथा उसकी समस्याओ से दूर कल्पना लोक की वस्तु है, जिसमे कही कही सामाजिक जीवन की छाया प्रतिभासित हो उठती है। 'कौशिक' जी ने जीवन मे प्रवेश कर यथार्थ का निरीक्षण किया और अनेको सामाजिक तथा पारिवारिक समस्याओ पर प्रकाश डालते हुए उनका समाधान प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। शिल्प की दृष्टि से भी इन्होने कई महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किये, हिन्दी कहानी-कला मे सवादात्मक शैली का सूत्रपात किया तथा पात्रो के चरित्र-चित्रण पर विशेष बल दिया। शुद्ध मनोरजन के स्थान पर समाज-सुधारात्मक आदर्शवादी लक्ष्य को लेकर इन्होने उच्च उद्देश्य-प्रधान कथा साहित्य की रचना की।

कहानी की लोकप्रियता

कहानी जीवन की वास्तविकता को प्रतिबिम्बित करके मानव-जीवन के किसी सघर्षमय सवेदनात्मक पक्ष का उद्घाटन करती हुई जीवन के प्रगतिशील तत्वो का समावेश करती है तथा नवीन मानव-मूल्यो की स्थापना के साथ-साथ उन प्राचीन मूल्यो की खोज करती है जो परिवर्तनशील परिस्थितियो म मनुष्य के भावों की उन्नति के लिए अनिवार्य होते हैं। "मानव जीवन मे कहानी का आदि स्थान है। ज्यो ही मनुष्य को बोलना आया होगा, उसी क्षण से किसी-न-किसी रूप मे कथा कहानी का आरम्भ हुआ होगा। कौतूहल और जिज्ञासा, अर्थात् क्यो, कैसे की स्वाभाविक प्रवृत्ति ने इसके जन्म मे इतनी बलवती प्रेरणा दी होगी कि साहित्य के इस माध्यम ने बहुत ही शीघ्र मानव-समाज को अपने आकर्षण और अनिवार्यता की सीमा मे बाँध लिया होगा।"[1]

काल्पनिक तत्व की प्रधानता तथा मानव-जीवन के वास्तविक रहस्यो के उद्घाटन के अभाव के कारण भारतेन्दु-युग तक कहानी समाज मे अधिक लोकप्रियता

---

१. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास'—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, पृ० ३६६।

प्राप्त न कर सकी। उस युग मे छोटी-छोटी १०-१२ पृष्ठो की रचनाम्रो को स्वय लेखको के द्वारा उपन्यास की सज्ञा दी जाती थी। इसका 'कारण एकमात्र यही था कि या तो 'कहानी' का प्रवेश साहित्यिक ग्रथों में नही हो पाया था और यदि हो भी गया था, तो वह बहुत लोकप्रिय न हो सका था।"[1]

'कौशिक' जी के युग तक आते-आते उपन्यास और कहानी हिन्दी-गद्य-साहित्य का प्रतिनिधित्व करने लगे। समकालीन प्रतिभासम्पन्न कलाकारो ने कथा साहित्य के माध्यम से साहित्य के नूतन विकास-क्षेत्र मे जो नवीन रचनाएँ प्रस्तुत की उनमे समाज का स्वर मुखरित हो उठा। कथा-साहित्य मे शैली तथा कथानक, विचार एव भावना, सभी क्षेत्रो मे कहानी के नवीनतम चित्र प्रस्तुत किये गये। ऐतिहासिक, सामाजिक और सास्कृतिक पात्रो तथा घटनाम्रो का चित्रण किया गया। इतिवृत्ति एव घटनाप्रधान कहानियो के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण एवं अन्तर्बाह्य जगत के सघर्षों को लेकर कहानियो की रचना की गई। वस्तुत कथा-साहित्य ने मानव-जीवन का सर्वांगीण चित्रण प्रस्तुत कर अधिकाधिक पाठको को अपनी ओर आकृष्ट किया।

"द्विवेदी-युग मे 'सरस्वती' मे अनेक लेखको की कहानियो को स्थान मिलने लगा और धीरे-धीरे लेखको एव पाठको का ध्यान साहित्य के अन्य रूपो की अपेक्षा कहानी की ओर अधिक आकृष्ट होने लगा।"[2] पाठकों की कहानी पढने की बढ़ती हुई माँग की पूर्ति के लिए काशी से 'इन्दु' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसके पश्चात् 'हिन्दी-गल्प माला' नामक शुद्ध कहानी मासिक पत्र प्रकाशित हुआ। कथा-साहित्य को लोकप्रिय बनाने तथा कहानियों के अनेक रूपो एव शैलियो के विकास मे 'गल्प-माला' का कार्य सराहनीय है। वैसे इन सभी पत्रिकाम्रो 'सरस्वती', 'इन्दु', 'जीवन' तथा 'हिन्दी प्रदीप' आदि मे कथा-साहित्य को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ। कहानी-विधा को लोक प्रिय बनाने मे इनका योगदान महत्वपूर्ण रहा, जिसके फलस्वरूप अनेक साहित्यकारो ने कहानी लेखन की ओर आकृष्ट होकर अपनी भावनाओ, कल्पनाओ तथा विचारो को कहानी के माध्यम से मूर्त रूप देने तथा कलात्मक चित्र प्रस्तुत करने की दिशा मे नवीनतम शैलीगत प्रयोग प्रस्तुत किये, जिससे साहित्य की इस विधा ने अत्यन्त चित्ताकर्षक बनकर लोकप्रियता प्राप्त की।

---

१. 'हिन्दी-कहानी : उद्भव और विकास'—डॉ० सुरेश सिनहा, पृ० १७६।
२. 'हिन्दी-साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियां'—डॉ० गोविन्द राम शर्मा, पृ० ३७२।

की धारा। प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में आदर्शोन्मुख यथार्थवादी प्रवृत्ति की प्रधानता रही।

'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिन्दी कथा-साहित्य में चरित्र प्रधान कहानियों की सृष्टि करते हुए अपने पूर्वयुगीन कथा-साहित्य के अभाव को पूर्ण किया, अपने युग के प्रमुख समाज-सुधारवादी एवं राजनीतिक आन्दोलनों को कथा-साहित्य में अभिव्यक्ति दी और मानव-जीवन के साथ सम्पर्क स्थापित करते हुए समाज के यथार्थ स्वरूप को उपस्थित किया। इनका पूर्वयुगीन कथा-साहित्य मानव जीवन तथा उसकी समस्याओं से दूर कल्पना लोक की वस्तु है, जिसमें कहीं-कहीं सामाजिक जीवन की छाया प्रतिभासित हो उठती है। 'कौशिक' जी ने जीवन में प्रवेश कर यथार्थ का निरीक्षण किया और अनेकों सामाजिक तथा पारिवारिक समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए उनका समाधान प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। शिल्प की दृष्टि से भी इन्होंने कई महत्वपूर्ण प्रयत्न किये, हिन्दी-कहानी-कला में संवादात्मक शैली का सूत्रपात किया तथा पात्रों के चरित्र-चित्रण पर विशेष बल दिया। शुद्ध मनोरंजन के स्थान पर समाज-सुधारात्मक आदर्शवादी लक्ष्य को लेकर इन्होंने उच्च उद्देश्य-प्रधान कथा-साहित्य की रचना की।

कहानी की लोकप्रियता

कहानी जीवन की वास्तविकता को प्रतिबिम्बित करके मानव-जीवन के किसी संघर्षमय संवेदनात्मक पक्ष का उद्घाटन करती हुई जीवन के प्रगतिशील तत्वों का समावेश करती है तथा नवीन मानव-मूल्यों की स्थापना के साथ-साथ उन प्राचीन मूल्यों की खोज करती है जो परिवर्तनशील परिस्थितियों में मनुष्य के भावों की उन्नति के लिए अनिवार्य होते हैं। "मानव जीवन में कहानी का आदि स्थान है। ज्यों ही मनुष्य को बोलना आया होगा, उसी क्षण से किसी-न-किसी रूप में कथा कहानी का आरम्भ हुआ होगा। कौतूहल और जिज्ञासा, अर्थात् क्यों, कैसे की स्वाभाविक प्रवृत्ति ने इसके जन्म में इतनी बलवती प्रेरणा दी होगी कि साहित्य के इस माध्यम ने बहुत ही शीघ्र मानव-समाज को अपने आकर्षण और अनिवार्यता की सीमा में बाँध लिया होगा।"[1]

काल्पनिक तत्व की प्रधानता तथा मानव-जीवन के वास्तविक रहस्यों के उद्घाटन के अभाव के कारण भारतेन्दु-युग तक कहानी समाज में अधिक लोकप्रियता

---

१. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास'—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, पृ० ३६६।

लोकप्रियता का यह उत्कृष्टतम प्रमाण है। जन-जीवन मे उठती हुई नित्य नवीन समस्याओ ने हिन्दी साहित्यकारो का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ कौशिक', सुदर्शन, जी० पी० श्रीवास्तव, ज्वालादत्त शर्मा, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी चतुरसेन शास्त्री, गोविन्द वल्लभ पन्त, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', भगवतीप्रसाद वाजपेयी, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' आदि साहित्यकारो की दृष्टि इस विधा की ओर गई और इन्होने जीवन के नवीन मूल्यो को पहचानते हुए युग की माँग को पूर्ण करने का प्रयास किया। इन्होने तत्कालीन जीवन से समस्याएँ लेकर उनका यथार्थ चित्रण अपनी कहानियो मे प्रस्तुत किया और घटनाओ की प्रधानता के स्थान पर चरित्रांकन पर बल देना आरम्भ किया। इनकी कहानियो के पात्र यथार्थ जीवन के जीते-जागते प्राणी और उनकी समस्याएँ मानव जीवन की ज्वलन्त समस्याएँ हैं।

इस काल की कहानियो का वर्गीकरण किसी एक सिद्धान्त के आधार पर करना कठिन है। प्राय सभी लेखको ने विभिन्न प्रकार की रचनाएँ की है और उन्हें पृथक पृथक भागो मे बाँटा जा सकता है। सम्भवत इनमे ऐसा एक भी लेखक नही है जिसने आद्योपात एक ही दृष्टिकोण को सामने रखकर कहानियो की रचना की हो और उसकी कहानियो को निर्विवाद रूप से एक ही वर्ग में रखा जा सके। युग की सम्पूर्ण हलचल तथा सामाजिक, राजनीतिक एव सास्कृतिक उथल पुथल का व्यक्त करने का सबसे सरल और सशक्त माध्यम कहानी ही था। अत तत्कालीन आदोलनो और सुधारवादी प्रवृत्तियो का प्रभाव सभी कहानीकारो की रचनाओ मे न्यूनाधिक रूप मे मिलता है।

निष्कर्षत अधिकाश लेखको ने व्यक्तिगत विशेषताओ के साथ कथा-साहित्य म अपने युग को प्रतिबिम्बित किया और कहानी लेखन का प्रवाह, लोकप्रियता के कारण शीघ्र ही अन्य साहित्यिक विधाओ से बहुत आगे बढ गया तथा तत्कालीन सभी पत्र-पत्रिकाओ मे कहानियो को प्रमुखता दी जाने लगी।

समयुगीन मानव-प्रवृत्ति समयाभाव के कारण विस्तारगामी मनोरंजन के साधनों का परित्याग कर संक्षिप्त मनोरंजन के क्षेत्रों में पदार्पण करती जा रही थी। साहित्यिक क्षेत्र में पाठकों की रुचि लम्बे-लम्बे नाटकों, महाकाव्यों और उपन्यासों से हटकर छोटे नाटकों, एकांकियों, मुक्तक कविताओं तथा कहानियों की दिशा में अग्रसर हुई। इस प्रवृत्ति ने कहानी-रचना को विशेष प्रश्रय प्रदान किया। मानव-जीवन की व्यस्तता के कारण आधुनिक युग में कहानी अत्यधिक लोकप्रिय होती चली गई। मनुष्य को अध्ययन के लिए जो भी थोड़ा-सा अवकाश मिलता है उसमें वह कहानियाँ पढ़ने का ही अधिक इच्छुक रहता है क्योंकि वे लघु आकार की होने के कारण कम समय में पढ़ी जा सकती हैं। डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के शब्दों में "वर्तमान युग में समय का मूल्य बढ़ गया है। थोड़े-से-थोड़े समय में अधिक उत्पादन और आभाग को महत्त्व मिल रहा है। अतएव नाटक और उपन्यास ऐसी विस्तार-गामी रचनाओं को पढ़ने के लिए जितना समय अपेक्षित होता है, उतना सभी सरलता से नहीं दे पाते। ' आज कहानी ही अपनी लघुता के कारण सर्वप्रिय विषय बन रहा है।"[1]

कहानी अधिकांश पाठकों के मनोविनोद का साधन है। इसका प्रचार उस युग में इतना व्यापक हुआ कि केवल कहानी-विधा को लेकर अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होने लगा, जिनका प्रसार स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों के वाचनालयों, रेलवे स्टेशनों और फुटपाथों पर विशेष रूप से दिखाई देने लगा। यात्रा करते हुए साधा-रण यात्रियों तक के हाथों में कहानी-पत्रिकाएँ दिखाई पड़ने लगी। शिक्षालयों में कहानी-प्रतियोगिताएँ आरम्भ हुई। साहित्य की इसी विधा को यह श्रेय प्राप्त हुआ, जिसने साधारण पढ़े लिखे व्यक्तियों का भी अपनी ओर आकृष्ट कर मनोरंजन प्रदान किया। फलस्वरूप निरंतर इसके पाठकों तथा लेखकों की वृद्धि होती गई और कहानी-साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा बन गई।

कथा-साहित्य की ओर साहित्यकारों की दृष्टि

कहानी की लोकप्रियता के फलस्वरूप 'कौशिक' जी के समकालीन अनेक प्रसिद्ध साहित्यकारों की दृष्टि इस विधा की ओर आकृष्ट हुई। जयशंकर प्रसाद और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जैसे प्रसिद्ध कवि तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे विख्यात आलोचक भी कहानी-लेखन की दिशा में अग्रसर हुए। कहानी विधा की

---

१. 'कहानी का रचना-विधान'—पृष्ठ ४।

लोकप्रियता का यह उत्कृष्टतम प्रमाण है। जन-जीवन मे उठती हुई नित्य नवीन समस्याओ ने हिन्दी-साहित्यकारो का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ कौशिक', सुदर्शन, जी० पी० श्रीवास्तव, ज्वालादत्त शर्मा, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, चतुरसेन शास्त्री, गोविन्द वल्लभ पन्त, पाडेय बेचन शर्मा 'उग्र', भगवतीप्रसाद वाजपेयी, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' आदि साहित्यकारो की दृष्टि इस विधा की ओर गई और इन्होने जीवन के नवीन मूल्यो को पहचानते हुए युग की माँग को पूर्ण करने का प्रयास किया। इन्होने तत्कालीन जीवन से समस्याएँ लेकर उनका यथार्थ चित्रण अपनी कहानियो मे प्रस्तुत किया और घटनाओ की प्रधानता के स्थान पर चरित्राकन पर बल देना आरम्भ किया। इनकी कहानियो के पात्र यथार्थ जीवन के जीते-जागते प्राणी और उनकी समस्याएँ मानव जीवन की ज्वलन्त समस्याएँ हैं।

इस काल की कहानियो का वर्गीकरण किसी एक सिद्धान्त के आधार पर करना कठिन है। प्राय सभी लेखको ने विभिन्न प्रकार की रचनाएँ की है और उन्हें पृथक पृथक भागो मे बाँटा जा सकता है। सम्भवत इनमे ऐसा एक भी लेखक नही है जिसने आद्योपात एक ही दृष्टिकोण को सामने रखकर कहानियों की रचना की हो और उसकी कहानियो को निर्विवाद रूप से एक ही वर्ग म रखा जा सके। युग की सम्पूर्ण हलचल तथा सामाजिक, राजनीतिक एव सास्कृतिक उथल-पुथल को व्यक्त करने का सबसे सरल और सशक्त माध्यम कहानी ही था। अत तत्कालीन आदोलनो और सुधारवादी प्रवृत्तियो का प्रभाव सभी कहानीकारो की रचनाओ मे न्यूनाधिक रूप मे मिलता है।

निष्कर्षत अधिकाश लेखकों ने व्यक्तिगत विशेषताओ के साथ कथा-साहित्य म अपने युग को प्रतिबिम्बित किया और कहानी-लेखन का प्रवाह, लोकप्रियता के कारण शीघ्र ही अन्य साहित्यिक विधाओ से बहुत आगे बढ़ गया तथा तत्कालीन सभी पत्र-पत्रिकाओ मे कहानियो को प्रमुखता दी जाने लगी।

तृतीय अध्याय

'कौशिक' जी की कहानियों का वर्गीकरण तथा प्रमुख कहानियों का परिचय

'कौशिक' जी ने अपने जीवन-काल मे लगभग तीन सौ कहानियो की रचना की, जो 'मणिमाला', 'गल्पमन्दिर', 'प्रायश्चित', 'प्रेम प्रतिमा', 'कल्लोल' (सन् १९४९) *'बन्ध्या'* (सन् १९५३), *'चित्रशाला'* (सन् १९५८), *'पेरिस की नर्तकी'* (सन् १९५८), 'साथ की होली' (सन् १९५८), 'ईश्वरीय दण्ड' (सन् १९५९) 'खोटा बेटा' (सन् १९५९), 'जीत में हार' (सन् १९५९), 'प्रतिशोध' (सन् १९५९), 'रक्षा-बन्धन' (सन् १९५९), 'एप्रिल फूल' (सन् १९६०), *'विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' की इक्कीस कहानियाँ'* (सन् १९६४), *'पथ-निर्देश'* (सन् १९६५) आदि, कथा सग्रहो मे सकलित है। समय-समय पर लिखी जानेवाली इनकी कुछ कहानियाँ समकालीन पत्र-पत्रिकाओ मे भी प्रकाशित होती रहीं, जैसे 'रक्षा-बन्धन'[1], 'सुफल'[2] और 'मिलन'[3] आदि। इनकी अधिकाश कहानियों के सग्रह इनकी मृत्यु के पश्चात् ही प्रकाशित हुए है। कहानी सग्रहो के अतिरिक्त इनकी 'विजयानन्द दुबे' के नाम से 'दुबे जी की डायरी' तथा 'दुबे जी की चिट्ठियाँ' नामक रचनाएँ भी उपलब्ध हैं, जिन्हें कथा साहित्य के अन्तर्गत रखना ही उपयुक्त होगा। ये लेखक के गल्प-साहित्य की उत्कृष्टतम रचनाएँ हैं, जो साहित्य की किसी अन्य विधा के अन्तर्गत नही रखी जा सकती। कुछ आलोचक इन्हे हास्य लेखो के अन्तर्गत स्वीकार करते हैं[4], परन्तु अधिकाश आलोचको ने इन्हें कहानी साहित्य के ही अन्तर्गत रखा है। श्री त्रिलोचन पाण्डेय के शब्दो मे 'दुबे जी की चिट्ठियाँ भी आपकी कहानियो का सग्रह है।'[5] प्रो०

---

१ 'सरस्वती' १९१३।

२ 'चाँद', १९३८, पृष्ठ ३६०।

३ 'चाँद', १९३५ ३६ पृष्ठ ५७५।

४ "'दुबे जी की डायरी' उनके हास्य लेखों का सकलन है।" दुबे जी की डायरी—विजयानन्द दुबे पृष्ठ २ (ये डायरी के पृष्ठ देवीप्रसाद धवन विकल)।

५ 'साहित्य सदेश' ७-८ अक जनवरी फरवरी १९५३, पृष्ठ ३१२।

मोहनलाल जिज्ञासु ने भी इन्हे कहानियो के ही अन्तर्गत स्वीकार करते हुए कहा है, "उन्होने कुछ हास्यपूर्ण कहानियाँ भी लिखी हैं—'दुबे जी की चिट्ठी' आदि ।"[1] इन पुस्तको की रचना डायरी तथा पत्रात्मक शैली मे हुई है। सभव है कुछ आलोचक इन्हे कहानी की सज्ञा न दें परन्तु इनके मूल आकार पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन पत्रो के रूप मे लेखक ने समकालीन समस्याओ एव परिस्थितियों को लेकर व्यग्य चित्र प्रस्तुत किये हैं। इनमे कुछ पत्रो का आकार निश्चित रूप से कहानी के अनुरूप हैं।

'कौशिक' जी ने अपने युग की सुधारवादी प्रवृत्ति से प्रभावित होकर समकालीन सभी परिस्थितियो तथा आन्दोलनो का चित्रण करते हुए अपनी कहानियो मे आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की तथा इसके लिए विशेषत तत्कालीन समाज एव राजनीति के क्षेत्र से विषय ग्रहण किये। वस्तुत कथा के गठन मे आधार उपस्थित करने वाले विषयो की दृष्टि से इनकी कहानियाँ प्रमुखत दो वर्गों मे विभाजित की जा सकती है —

१ सामाजिक कहानियाँ ।

२ राजनीतिक कहानियाँ ।

उक्त दो प्रकार की कहानियो के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक विषयो को भी कुछ कहानियो का आधार बनाया परन्तु इनकी सख्या बहुत कम है, इसलिये इनके लिये एक तीसरा वर्ग 'विविध कहानियाँ' बना सकते हैं। 'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य मे मुख्यत इतिवृत्त, चरित्र चित्रण तथा घटनाओ को ही प्रधानता दी। इस दृष्टि से इनकी कहानियाँ निम्न तीन प्रकार की हैं —

१ इतिवृत्त प्रधान कहानियाँ ।

२ चरित्र प्रधान कहानियाँ ।

३ घटना-प्रधान कहानियाँ ।

वस्तु चरित्र तथा घटना के अतिरिक्त कुछ कहानियो मे कार्यतत्व की प्रधानता हैं, इन्हें कार्य-प्रधान कहानियो के अन्तर्गत रखा जा सकता है, परन्तु इस प्रकार की कहानियो की सख्या बहुत कम है। इसलिए इन्हें घटना प्रधान कहानियो के वर्ग मे भी रख सकते हैं। कुछ कहानियों की रचना केवल मनोरजन की दृष्टि से की

---

१ 'कहानी और कहानीकार' पृष्ठ ८१ ।

आग लगा देती है। वह अपनी रक्षा के लिये सास को पकड लेती है, जिससे दोनो जलकर मर जाती हैं। इस भयङ्कर दुष्परिणाम पर लेखक ने दृष्टि डाली है। 'वह प्रतिमा', 'पतिव्रता', 'प्रेम का पापी', तथा 'मालती का प्रेम' आदि कहानियो मे पति-पत्नी तथा स्त्री पुरुष के प्रेम-सम्बन्धो पर प्रकाश डाला है।

भारतीय समाज मे त्यौहारो को विशेष महत्व दिया जाता है तथा बहुत धूमधाम के साथ मनाया जाता है। 'कौशिक' जी ने 'विजयदशमी', 'वाह री होली', 'शुक्ल जी की होली', 'होली', 'दीवाली', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'बडा दिन', 'एप्रिल फूल', 'रक्षाबन्धन' आदि पर्वों से सम्बन्धित कहानियों की रचना की, जिनमे विभिन्न पर्वों, होली, दिवाली, विजयदशमी तथा रक्षाबन्धन पर होने वाले सामाजिक रीतिरिवाजो और कार्यों का चित्रण किया। होली के त्यौहार पर वृद्ध पुरुषों में भी होली खेलने की आकांक्षा तथा उत्साह रहता है और बच्चे तथा नवयुवक किस प्रकार उनके साथ होली खेलते हैं इस सामाजिक तथ्य को 'कौशिक' जी ने पकडा और अपनी कहानियो मे प्रस्तुत किया। पहली अप्रैल के दिन किस प्रकार व्यक्ति अपने मित्रो तथा सम्बन्धियो को मूर्ख बनाते हैं, इसका चित्रण 'एप्रिल फूल'[1] कहानी में मिलता है, जिसमे प० श्यामनाथ की पत्नी अपने पति के उन मित्रो को बडी चालाकी से मूर्ख बना देती है जो नित्य ही उसके पति को नीचा दिखाने के प्रयत्न मे लगे रहते थे तथा पहली अप्रैल के दिन प० श्यामनाथ की पत्नी के दर्शनों के लिए उनक घर आये।

'बुद्धिबल', 'धर्म का धक्का', 'राजा निरजन' तथा 'ढपोर शख' आदि कहानियो मे 'कौशिक' जी ने धार्मिक क्षेत्र के खोखलेपन को स्पष्ट किया है। 'भक्त'[2] कहानी मे यह आदर्श उपस्थित किया गया है कि सच्चा भक्त पूजा का कृत्रिम आडम्बर करने वाला व्यक्ति नही वरन् रोगियो तथा निर्धनो की सहायता करने वाला व्यक्ति ही सच्चा भक्त है। समाज मे ऐसे व्यक्तियो का अभाव नही जो अपने यश के लिये साधु-सन्यासियो को नित्य दान करते रहते हैं, कीर्तन करवाते हैं तथा अनेक प्रकार के धार्मिक आडम्बर करते रहते हैं परन्तु किसानो तथा निर्धन व्यक्तियो पर नाना प्रकार के अत्याचार करके अपना आतक जमाये रहते हैं। 'भक्त' कहानी के प्रमुख पात्र ठाकुर किशनसिंह इसी प्रकार के ढोंगी भक्त हैं।

---

१. 'एप्रिल फूल' [कहानी-सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १५८-१७४।
२ 'एप्रिल फूल' [कहानी सग्रह]— ,, , पृ० ११०।

भाग्यवाद पर 'कौशिक' जी का दृढ विश्वास था। अपनी इस मान्यता का चित्रण भी उन्होने कुछ कहानियो-'भाग्य-चक्र' तथा 'नियति' आदि मे किया है। 'भाग्य-चक्र'[1] कहानी इस तथ्य का स्पष्टीकरण करती है कि मनुष्य का भाग्य प्रति क्षण चक्र की भाँति परिवर्तित होता रहता है और व्यक्ति को कहाँ-से-कहाँ ले जाता है। भारतीय समाज मे अधिकाश जनता इसी धारणा मे विश्वास रखती है।

भारतीय समाज के निर्धन किसानो तथा श्रमिको आदि के जीवन की समस्याओ का चित्रण 'कौशिक' जी की 'अपयश', 'बेदखली' 'आर्त', 'गरीब हृदय', 'उद्धार', 'अशिक्षित का हृदय', 'दरिद्रता का पुरस्कार', 'पूजा का रुपया' तथा 'मोह' आदि कहानियो में किया है। ग्रामीण जीवन मे किसान चाहे कितने भी अशिक्षित हो परन्तु हृदय उनका भी भावुकता से ओत-प्रोत रहता है। वे अपनी जमीन तथा वृक्षो इत्यादि से एक प्रकार की साहचर्यजनित भावनाएँ जोड लेते हैं फिर उनकी रक्षा के लिये अपने प्राण तक देने को तैयार हो जाते हैं। इस तथ्य का निरूपण 'अशिक्षित का हृदय'[2] कहानी मे किया गया है। वृद्ध मनोहरसिंह ठाकुर शिवपालसिंह के द्वारा अपना नीम का पेड कटवाने के लिये किसी शर्त पर भी तैयार नही होता। उस वृक्ष पर ठाकुर का अधिकार हो जाये इस बात को तो वह स्वीकार कर लेता है परन्तु वृक्ष को कटवाने के विचार पर अपनी जान पर खेलने के लिये कटिबद्ध हो जाता है। 'दरिद्रता का पुरस्कार'[3] कहानी समाज की निर्धनता की समस्या को लेकर लिखी गई है। निर्धन व्यक्ति किस प्रकार अपने जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिये 'चोरी' आदि बुरे कार्यो की ओर कदम बढाते हैं तथा पकडे जाने पर पुलिस की मार तथा समाज का धिक्कार सहते हुए आत्मग्लानि वश मृत्यु की गोद मे आश्रय लेते हैं—'मोहन' का जीवन इसी तथ्य को स्पष्ट करता है। वह व्यक्ति निर्धनता के कारण विवश होकर एक दुकान से धोती चुराने पर पकडा जाता है तथा पुलिस की मार खाता है और अन्त मे समाज से तिरस्कृत होकर दरिद्रता के पुरस्कार, मृत्यु को प्राप्त करता है।

समाज के निम्न तथा मध्य-वर्ग के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने कुछ कहानियो 'राजा और प्रजा', 'राज पथ', 'राजा निरजन', 'गुण ग्राहकता', 'महाराज पैलेस',

---

१. 'चित्रशाला' [कहानी-सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ४५-१०१।
२. 'प्रतिशोध' ,, — ,, पृ० १०४ ११४।
३ 'अध निर्देश' ,, ,, पृ० ६३ १११।

'विजय', 'तमाचा' तथा 'साथ की होली' आदि मे राजाओ और जमीदार-वर्ग के जीवन की समस्याओं, उनके प्रजा या साधारण जनता के साथ अच्छे तथा बुरे व्यवहारो का चित्रण किया है। मध्यवर्गीय समाज के जीवन की समस्याओ, मान्यताओं, परम्परागत रूढियो एव अन्धविश्वासो के चित्रण मे 'कौशिक' जी को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। पारिवारिक जीवन के छोटे छोटे चित्र उपस्थित करते हुए वैवाहिक सम्बन्धो के प्रति पवित्र दृष्टिकोण तथा भाग्यवाद मे दृढ विश्वास रखते हुए मध्यवर्गीय समाज के नैतिक मूल्यो एव मर्यादाओ का चित्रण इन्होंने अपनी कहानियो मे प्रस्तुत किया है। समाज मे पुरुषों के समान अधिकार तथा स्वतन्त्रता की आकाक्षा करने वाली स्त्रियाँ किस प्रकार अपने जीवन को निराशापूर्ण तथा अशान्तिप्रद बना लेती हैं इसका यथार्थ चित्रण 'कौशिक' जी की 'स्वतत्रता'[1] शीर्षक कहानी मे मिलता है। इसके प्रमुख पात्र 'सुखदेव' की स्त्री प्रियवदा भी स्त्री-पुरुष के समानाधिकार की दुहाई देती हुई पूर्ण स्वतत्रता की माँग करती है तथा पति की सुख-सुविधा आदि किसी बात का ध्यान नही रखती। परन्तु अत मे सुखदेव के पूर्ण स्वतत्र कर देने पर पहले तो प्रसन्न होती है, सुखदेव को आदर्श पति कहती है, फिर धीरे-धीरे उसे अपने जीवन मे प्रेम का अभाव खलने लगता है और वह पति का प्रेम प्राप्त करने के लिये व्याकुल हो उठती है। सुखदेव उसे अपना स्पर्श तक करने को इकार कर देता है और व्यग्यपूर्ण शब्दो मे कहता है, "मुझे तुम्हें पूर्ण रूप से स्वतत्र कर देने मे आनद आता है। मेरे आनद की पराकाष्ठा तो उस दिन होगी, जिस दिन तुम अपने भरण-पोषण के लिए चार पैसे पैदा करने लगोगी।" इस प्रकार 'कौशिक' जी ने यह सिद्ध किया है कि प्रेमीजन स्वतत्र नही होते।[2] लेखक के मतानुसार 'जिन स्त्री-पुरुषो मे प्रेम नही होता, वे बात-बात मे स्वतत्रता और अधिकार की दुहाई देते हैं। परिणाम यह होता है कि आपस मे जूता चलता है और तलाक की नौबत आ जाती है।" अत 'स्वतत्रता' कहानी मे लेखक ने दिन-प्रतिदिन आधुनिक स्वतत्र विचारो के प्रभाव से पति पत्नी की पारस्परिक कलह का चित्रण करते हुए तलाक के कारणो पर प्रकाश डाला है।

'जाल', 'विधवा की होली' 'वन्ध्या', 'वशीकरण', 'सौन्दर्य', 'हिन्दुस्तान', 'शहर की हवा', 'स्वय सेवक', 'पैसा', 'मनुष्यता का दण्ड', 'विधवा', 'लोकापवाद',

---

१ 'पथ निर्देश [कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ३३ ५३।
२ "जहाँ प्रेम होता है, वहाँ स्वतन्त्रता तथा अधिकार का प्रश्न कभी उठ ही नहीं सकता।'—'पथ निर्देश' [कहानी-सग्रह]—पृ० ५२।

'पाकिस्तान', 'यौवन की आँधी', 'भगवान की इच्छा', 'भगवान् की कृतघ्नता', 'भूत लीला', 'भ्रम', 'मकान खाली है', 'महँगा सौदा', 'पाप का बल', 'पत्रकार', प्रेत', 'प्रमाद', 'खिलावन काका', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'ननकू चौधरी', 'नकल', 'अदृष्ट', 'अपराधी', 'कर्त्तव्य परायण', 'ताश का खेल', 'नर-पशु','अतिचार', 'गँवार', 'घुन', 'इस्तीफा', 'इक्के वाला', 'आर्त', 'कुपात्र', 'चकमा', 'अभिन्न', 'अवसरवाद', 'कृतज्ञता', 'कलक', 'दाँत का दर्द', 'कम्युनिस्ट सभा', 'अविद्या', 'खानदानी', दुरुपयोग', तथा 'सुधार' आदि सभी कहानियाँ सामाजिक वर्ग के अन्तर्गत विशेष स्थान रखती है। इनमे 'कौशिक' जी ने समाज के विभिन्न पहलुओ पर प्रकाश डाला है और सामाजिक कुरीतियो से समाज के उद्धार के प्रयत्नो पर दृष्टि डाली है। यथार्थ एव आदर्श के अद्भुत सम्मिश्रण के कारण इनकी कहानियो मे सामाजिक पुनरुत्थान, सुधार तथा नवजागरण की भावनाओ की सूक्ष्म रूप मे अभिव्यक्ति हुई है। डॉ० सुरेश सिनहा के शब्दो म—"विश्वम्भरनाथ कौशिक मुख्यत सामाजिक सचेतना के कहानीकार हैं। . . उन्होने अपनी कहानियो मे व्यक्ति के जीवन को नैतिकता और समाज कल्याण की कसौटी पर परखकर उसकी वैयक्तिक समस्याओ का समाधान सामाजिक सन्दर्भों के आयामो की सीमाओ मे अन्वेषित करने का प्रयास किया है और समष्टि चिंतन को अभिव्यक्ति दी है।"[१] 'कौशिक' जी जीवन के बाह्य रूपो तथा समस्याओ से अधिक सम्बद्ध थे इसलिए उनकी कहानियो मे मूल रूप से आदर्शवाद तथा सुधारवाद की प्रतिष्ठा हुई है, फिर भी उनमे यथार्थवाद का भी चित्रण हुआ है। डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा ने लिखा है—' इनकी कहानियो द्वारा समाज के उत्थान-मार्ग का निदर्शन हो जाता है। व्यक्ति, परिवार तथा समाज के विविध क्षेत्रो के बीच दैनिक जीवन मे यथार्थ और आदर्श का सघर्ष कराते हुए ये अन्त मे आदर्श की प्रतिष्ठा करते हैं।"[२] वस्तुत सामाजिक कहानियों के चित्रण मे 'कौशिक' जी को सर्वाधिक सफलता प्राप्त हुई है।

राजनीतिक कहानियाँ

इस वर्ग के अन्तर्गत 'कौशिक' जी की 'पेरिस की नर्तकी', 'प्रतिहिंसा', प्रतिशोधोन्माद' तथा 'जीडरी का पेशा' आदि कहानियो को रखा जा सकता है। इनमे लेखक ने समकालीन राजनीतिक वर्ग, पूँजीवाद तथा साम्यवाद की नीतियो और

---

१. 'हिन्दी-कहानी उद्भव और विकास'—पृ० ३७७।

२. 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—पृ० २२१।

समाज-सुधारक ढोंगी नेताओं की चालबाजियों का चित्रण करते हुए अपने युग की राजनीतिक उथल-पुथल की झाँकी प्रस्तुत की है और पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। प्रथम तीन कहानियाँ फ्रांस तथा जर्मन के युद्ध-सम्बन्धी राजनीतिक विषय पर आधारित हैं। उनके युग में स्वराज्य-प्राप्ति के उद्देश्य से राष्ट्रीय आन्दोलन सक्रिय था। मुस्लिम लीग, होमरूल लीग और स्वराज्य पार्टी आदि की स्थापना हुई तथा गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन का श्रीगणेश हुआ। इन सभी विषयों पर 'कौशिक' जी ने अपनी 'दुबे जी की डायरी' तथा 'दुबे जी की चिट्ठियाँ' में सुन्दर प्रकाश डाला है। 'अहिंसा' तथा 'स्वयं-सेवक' आदि कहानियों में तत्कालीन जीवन से पात्र ग्रहण करके उनका चरित्र-चित्रण किया है। इनके अतिरिक्त कुछ कहानियों में राजनीतिक वातावरण का चित्रण करना लेखक को अभीष्ट रहा है जैसे 'राशन कार्ड', 'वीर परीक्षा', 'कम्युनिस्ट-सभा', 'देश-भक्ति' आदि कहानियों में राजनीतिक युद्धों, सभाओं तथा राशन आदि की व्यवस्थाओं का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। सामाजिक कहानियों की अपेक्षा इस वर्ग की कहानियों की संख्या बहुत कम होने पर भी इनमें तत्कालीन राजनीतिक जीवन की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है तथा पात्रों के चरित्र की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है अतः इन्हें एक भिन्न वर्ग में रखना उचित ही है।

विविध कहानियाँ

उक्त दो विषयों के अतिरिक्त कुछ कहानियों में कौशिक जी ने ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक विषयों का भी आश्रय लिया है, परन्तु उनमें लेखक का उद्देश्य प्रमुख रूप से इतिहास और मनोविज्ञान के तथ्यों का स्पष्टीकरण न होकर प्रेम के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करते हुए घटनाओं का चित्रण करना रहा है। 'आजादी' शीर्षक कहानी एक ऐतिहासिक पात्र, मुसलमान बादशाह शाहजहाँ के पुत्र दाराशिकोह के जीवन की एक घटना के आधार पर लिखी गई है। दाराशिकोह वेश्या सकीना की पुत्री दौलती पर मुग्ध होकर उसे बुलवाने के लिए मुकबिल को भेजता है, परन्तु दौलती अपनी आजादी नष्ट होने के भय से वहाँ आने से इन्कार कर देती है। उसका विचार था कि दारा की बन्दिश में आने पर वह माँ से स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं मिल सकेगी। दारा जबरदस्ती उसे मगाता है परन्तु फिर आजादी की माँग करने पर वापस भेजने का आदेश दे देता है। तत्पश्चात् दौलती के दारा से अपने घर जाने की प्रार्थना करने पर दारा उत्तर देता है, "अगर बादशाह रियाया की जानोमाल के महाफिज भी दिल के ऐसे गुलाम बन जायँ कि अपने रुतबे को भूलकर मामूली इन्सानों की तरह एक तवायफ के घर आने-जाने लगें तो उनमें और मामूली इन्सान में

मे फर्क ही क्या रहा।"[1] अन्त वह दौल्ती के तर्क से उसी को निरुत्तर कर देता है और वह लज्जित होती है। औरंगजेब के दारा को कत्ल करवाने पर अधिक शोक मनाने वालो में सकीना तथा दौलती ही थीं। इस प्रकार से यह कहानी ऐतिहासिक पात्र के जीवन की एक घटना पर आधारित है, किसी विशेष ऐतिहासिक सत्य का उद्घाटन नहीं करती। अत इसे या तो सामाजिक कहानियो के वर्ग मे रखा जा सकता है या अलग से एक ऐतिहासिक कहानी के रूप मे भी स्वीकार किया जा सकता है।

'कौशिक' जी ने विशेष रूप से मनोवैज्ञानिक कहानियों की रचना नहीं की परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उनके कथा-साहित्य में मनोवैज्ञानिक चिन्तन का नितान्त अभाव है। पात्रों के चरित्र-चित्रण में लेखक ने मनोविज्ञान को विशेष रूप से मुखरित किया है। इनका मनोवैज्ञानिक चित्रण अधिकांशत व्यन्जित न होकर वर्णित रूप में सामने आता है। 'वह प्रतिमा' कहानी का आद्योपान्त आधार मनोविज्ञान ही रहा है। कहानी का आरम्भ ही प्रमुख पात्र के मानसिक पश्चात्ताप तथा उथल-पुथल के विश्लेषण से हुआ है।[2] इसी प्रकार से 'ताई' तथा कुछ अन्य कहानियों में भी 'कौशिक' जी ने पात्रो का मानसिक विश्लेषण बडे मनोवैज्ञानिक ढग से किया है। मनोवैज्ञानिक कहानी के विषय में 'कौशिक' जी ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं —

"मनोवैज्ञानिक कहानी वही है कि कहानी के पात्र जो कुछ सोचें वह सब आप कलम डालकर बाहर निकाल लें। प्रत्येक पात्र पर ऐसा जबरदस्त पहरा लगा दें कि वह कोई ऐसी बात सोच ही न सके जिसका पता आपकी कलम को न चल जाय या फिर जैसा आप चाहें वैसा ही सोचें समझें। बस यह समझ लीजिए कि प्रत्येक पात्र का दिमाग आपकी मुट्ठी म हो, जब जिस ओर चाहें उसे घुमा दें।"[3] इसी आधार पर इन्होंने मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रस्तुत किये हैं। 'वह प्रतिमा' कहानी

---

१. 'प्रतिशोध' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० २२६ २२७।

२ "स्मृति—वह मर्म स्पर्शी स्मृति जो हृदय पृष्ठ पर कष्टोत्पादक भावों की [illegible] ... [illegible] जिनका मिटना [illegible]
[illegible]
है, तन [illegible]
'चेतना'। [कहानी-संग्रह] पृष्ठ १९५। [illegible] दूर करने को [illegible]

३ 'दुबे जी की डायरी'—विजयानन्द दुबे, पृ० ४५।

को सामाजिक कहानियों के क्षेत्र मे भी रख सकते हैं तथा अलग से मनोवैज्ञानिक कहानी भी स्वीकार कर सकते हैं।

आञ्चलिक कहानियाँ लिखने की प्रवृत्ति हिन्दी-साहित्य मे उस समय विकसित नहीं हुई थी। इसलिए 'कौशिक जी की किसी कहानी को हम आञ्चलिक नही कह सकते। इनकी अधिकाश कहानियाँ शहरी जीवन से सम्बन्धित हैं, ग्रामीण जीवन को लेकर लिखी गई कहानियो के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि 'कौशिक' जी की ग्रामीण जीवन म अधिक पैठ नही थी। इनकी कहानियाँ प्रमुखत मध्यम वर्ग से सम्बन्धित हैं। उच्च वर्ग मे राजाओ, जमींदारो, नवाबो आदि के जीवन को लेकर भी कुछ कहानियाँ लिखी हैं, जैसे 'गुण ग्राहकता', 'राजा निरजन', 'विजय', 'डोना', 'तमाचा', 'महाराजा-पैलेस', 'न्याय', 'भक्त' इत्यादि। इनमे व्यग्य की प्रधानता रही है।

इतिवृत्तप्रधान कहानियाँ

'कौशिक' जी की अधिकाश कहानियाँ इतिवृत्त प्रधान हैं, जिनमे घटनाओ का जोड-तोड कुशलतापूर्वक किया गया है। जिस प्रकार मुशी प्रेमचन्द ने अपने कथा-साहित्य मे चरित्र-चित्रण का, प्रसाद ने प्रेम, सौन्दर्य तथा वातावरण तत्व को अपनी कहानियो का मूल विषय बनाया, उसी प्रकार 'कौशिक' जी ने कथा-तत्व को अपनी कहानियो मे प्रधानता दी। इन्होने सर्वप्रथम रोमाटिक कहानियो की दिशा बदल कर उन्हें सामाजिक रूप प्रदान किया और कथा-प्रधान बनाया। डॉ० श्रीकृष्ण-लाल के शब्दो मे—"कौशिक इस प्रकार के कहानी-लेखको मे सर्वश्रेष्ठ है।"[१] 'खोटा-बेटा', 'मुशी जी का श्राद्ध', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'महाराजा पैलेस', 'विजय-दशमी', 'शुक्ल जी की होली', 'एप्रिल फूल', 'सच्चा कवि', 'विनायक काका' तथा 'दाँत का दर्द' इत्यादि इसी प्रकार की कहानियाँ हैं जिनमे कहानीकार ने मनोरजक कथा प्रसगो द्वारा सुन्दर कहानियाँ कही हैं। इनमे चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण आदि तत्वो की अपेक्षा कथावस्तु को सजाने-सवारने तथा कुतूहलवर्धक ढग से पाठको के समक्ष प्रस्तुत करने की कला मे लेखक को अधिक सफलता प्राप्त हुई है। गृहस्थ-जीवन के आदर्श और यथार्थ के मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण इतिवृत्तात्मक रूप मे[२] कहते हुए 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियों मे विशेष परि-

---

१ 'आधुनिक हिन्दी-साहित्य का विकास', पृष्ठ ३९।
२ 'हिन्दी-कहानी शिल्प, इतिहास, आलोचना'—डॉ० अम्बुजा प्रसाद पाण्डेय, पृ० ३९।

स्थितियों मे उत्पन्न होने वाली मानव-मन की उलझनों पर विशेष बल दिया है।

कहानी लेखन मे कथा-तत्व को विशेष स्थान देने पर भी 'कौशिक' जी ने विषयगत अन्य तत्वों की अवहेलना नहीं की है। इनकी बहुत-सी कहानियों मे चरित्र चित्रण, वातावरण, कार्य और प्रभावात्मकता का कलात्मक विकास हुआ है। कहानीकार का ध्यान कथा के विकास मे घटनाओं के तारतम्य की ओर विशेष रूप से रहा है साथ ही कथा की प्रभावात्मकता को कहीं नष्ट नहीं होने दिया। कथा के अनुरूप वातावरण प्रस्तुत करने मे 'कौशिक' जी को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

चरित्र चित्रण प्रधान कहानियाँ

इस वर्ग के अन्तर्गत 'कौशिक' जी की ताई', 'इक्के वाला', 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'प्रेम का पापी', 'पेरिस की नर्तकी', 'साथ की होली', 'विधवा' तथा 'लीडरी का पेशा' आदि कहानियाँ रखी जा सकती हैं। इनमे कहानीकार की दृष्टि मानव-चरित्र के निगूढ़ रहस्यों के उद्घाटन पर प्रमुख रूप से रही है। सामाजिक, पारिवारिक तथा राजनीतिक जीवन के निम्न, मध्यम तथा उच्च सभी वर्गों के पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं पर प्रकाश डालना लेखक का उद्देश्य रहा है। इस क्षेत्र मे 'कौशिक' जी की विशेषता यह रही है कि उन्होने यत्र-तत्र पात्रों के चरित्रों मे आकस्मिक परिवर्तन कर डाला है। इस प्रणाली को कुछ आलोचक अस्वाभाविक अथवा असन्तुलित भावना का उद्रेक भी कह सकते हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि इसके मूल म सर्वदा ही लेखक की आदर्शवादी मनोवृत्ति प्रधान रही है। इसी सुधारवादी दृष्टिकोण ने आकस्मिक चरित्र-परिवर्तन को प्रश्रय प्रदान किया है। 'ताई' शीर्षक कहानी मे प्रमुख पात्र रामेश्वरी की आन्तरिक तथा बाह्य मनस्थितियों का चित्रण करते हुए अन्त मे उसे आदर्श चरित्र के रूप मे प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही बालक मनोहर के छज्जे से गिरने की घटना का समावेश करके उसके चरित्र में अचानक परिवर्तन ला दिया है। इसी प्रकार 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'सच्चा कवि', 'पथ निर्देश', 'माता का हृदय' तथा नास्तिक प्रोफेसर' इत्यादि कहानियों के प्रमुख पात्रों 'सेठ घु नूमल', 'प्रवीण जी', 'विश्वेश्वरनाथ', 'ब्रजमोहन' और 'ठकुराईं माँ' तथा 'प्रोफेसर कु जबिहारी' आदि को विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि के रूप म प्रस्तुत करने के लिए उनके चरित्र में आदर्श गुणों की स्थापना के उद्देश्य से आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित कर दिया गया है। ये चरित्र जीवन मे एक बार किसी घटना से ठोकर खाकर अपना व्यवहार परिवर्तित कर लेते हैं, यह लेखक की सुधारवादी प्रवृत्ति का ही परिणाम है। आदर्श चरित्रों की अवतारणा करते हुए 'कौशिक' जी ने अपनी चरित्र प्रधान कहानियों की रचना की है। इस प्रकार का

आकस्मिक परिवर्तन इनकी सभी चरित्र-प्रधान कहानियो मे नही मिलता। 'लीडरी का पेशा' कहानी इस गुण अथवा दोष से सर्वथा मुक्त है। इसमे प्रमुख पात्र 'पडित उमादत्त शुक्ल' नेतागिरी को पेशा समझकर अपनाते हैं और सदैव पिता की आज्ञा की उपेक्षापूर्वक अवहेलना करते हैं। अन्त मे पिता की मृत्यु का सूचना प्राप्त करन पर भी उनको अवर्किट के ... भाग नही जाते। कई मास पश्चात् घर आने तथा माता के खरी-खोटी सुनाने पर भी उन पर कोई प्रभाव नही पडता। माता अपने छोटे भाई के पास जाकर रहने लगीं तथा शुक्ल जी आराम से "पत्नी सहित वहीं रहकर देशोद्धार के लिए नित्य नई युक्तियाँ सोचने लगे।"[१] उनके चरित्र मे किसी प्रकार परिवर्तन नही किया गया, कारण इसमे लेखक का उद्देश्य तत्कालीन नेताओ के यथार्थ चरित्र को उपस्थित करना रहा है।

घटना-प्रधान कहानियाँ

कौशिक' जी की प्रमुख प्रवृत्ति वर्णनात्मक शैली के अन्तर्गत घटना-प्रधान कहानियाँ लिखने की ओर अधिक रही है। रेल यात्रा', रक्षा-बन्धन', ढोला', 'जीत मे हार', 'एप्रिल फूल', 'न्याय', 'राजपथ', 'अशिक्षित का हृदय', 'दाँत का दर्द', 'मुशी जी की दिवाली', 'पूजा का रुपया', 'विजय', 'जलन' धम आदि कहानियाँ इसी वर्ग के अन्तर्गत आती हैं। इनमे लेखक ने यथास्थान सयोग तत्व तथा दैवी घटनाओ के चमत्कार का आश्रय लिया है। प्रत्येक कहानी मे अनेक घटनाओ का अव्यवस्थित रूप मे समावेश न करके 'कौशिक' जी ने कम घटनाओ का ही सुव्यवस्थित ढग से चित्रण किया है। मनोरंजन, करुणा, आह्लाद, आश्चर्य तथा जिज्ञासा उत्पन्न करने वाली इनकी कहानियो की घटनाएँ पाठको के हृदय पर अपना प्रभाव छोडे बिना नहीं रहतीं। कौशिक' जी ने घटनाओ का चयन विशेषत सामाजिक पारिवारिक जीवन म होन वाल रीतिरिवाजो, धार्मिक कृत्यो तथा पारस्परिक व्यावहारिक कृत्यो के दृश्यों से किया है और तत्कालीन जीवन का यथार्थ चित्र उपस्थित किया है। डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय जी के शब्दो मे—'कौशिक जी ने अधिकतर घटना-प्रधान कहानियाँ लिखी हैं और वे घटनाएँ दैनिक, सामाजिक या पारिवारिक जीवन से लेते हैं।"[२] वस्तुत य घटनाप्रधान कहानियाँ लेखक के समकालीन साधारण जन-जीवन से अत्यधिक सम्पर्क होने की भावना को व्यक्त करती है।

---

१ 'चित्रशाला' [कहानी सग्रह]—पृष्ठ ६४।

२. "हिन्दी साहित्य का इतिहास'—डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय—पृष्ठ २६०।

वातावरण, प्रभाव तथा कार्य-प्रधान कहानियों की रचना मे लेखक की अधिक प्रवृत्ति दिखाई नही पडती । 'सबूत' शीर्षक कहानी को 'कार्य प्रधान' कहानियों की श्रेणी मे भी रख सकते हैं तथा घटना-प्रधान कहानियों के अन्तर्गत भी स्वीकार कर सकते है । इसमे एक खुफिया पुलिस-इन्सपेक्टर स्त्री-वेश धारण कर एक गिरहकट को सबूत सहित गिरफ्तार करता है । कहानी प्रारम्भ से अन्त तक कौतूहल-वृत्ति को जागृत करती है तथा अन्त मे कार्य की समाप्ति पर जिज्ञासा की तृप्ति हो जाती है । कार्य-प्रधान कहानियों मे किसी रहस्यमय अलौकिक चमत्कारपूर्ण कार्य का उल्लेख रहता है । इस प्रकार की कहानियाँ 'कौशिक' जी ने अधिक नहीं लिखीं । 'सबूत' कहानी का कार्य भी अलौकिक न होकर लौकिक विषय पर ही आधारित है परन्तु है जिज्ञासापूर्ण, अत इसे घटना-प्रधान और कार्य प्रधान दोनो ही वर्गो मे रखना उपयुक्त है ।

हास्य-प्रधान कहानियाँ

'एप्रिल फूल', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'मकान खाली है', 'प्रेत', 'पुराना सितार', 'स्टरप पम्प', 'भूत लीला', 'पहाड', 'चौबे स दुबे', 'दाँत का दर्द', 'शुक्ल जी की होली', 'ताश का खेल', 'हार जीत', 'जागरण', 'उडनछू', 'रेल-यात्रा', 'गणेश-वाहन', 'होली', 'ललतरानी', आदि कहानियों मे 'कौशिक' जी का प्रधान उद्देश्य हास्यपूर्ण विषयो की योजना द्वारा पाठकों का मनोरजन करना रहा है । इन कहानियों के कथानक सक्षिप्त हैं तथा पात्रो का चरित्र-चित्रण स्वाभाविक, सजीव एव परिस्थिति के अनुकूल हुआ है । पात्रो की सख्या कम है परन्तु उनके द्वारा पाठको के हँसने-हँसाने की पर्याप्त सामग्री उपस्थित की गई है । डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा के अनुसार "इनकी हास्य-प्रधान कहानियो मे शिष्ट तथा मर्यादित हास्य का रूप सामने आता है । इनमे रचना कला का वही रूप है जो इनकी अन्य कहानियों मे मिलता है ।"[१]

'ढपोर शख', 'मिलावन काका' तथा 'मुन्शी जी का ब्याह' आदि कहानियो मे कहानीकार ने ढोगी पडित, अधिक उम्र मे विवाह की आकाक्षा रखने वाले तथा अन्य व्यक्तियो के जीवन पर प्रकाश डालते हुये व्यंग्य चित्र प्रस्तुत किये है । इन कहानियों का विषय हास्य के साथ-साथ समाज की गली-सडी मान्यताओ, अन्ध-विश्वासो तथा रूढियो पर व्यग्य करना भी रहा है अत ये कहानियाँ हास्य-व्यग्य-प्रधान कही जा सकती हैं ।

---

१ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—पृष्ठ ११८ ।

'सद्भाव' 'अन्तिम भेंट', 'रक्षा-बन्धन', साध की होली', 'ऐप्रिल फूल', 'पाकिस्तान', 'अशिक्षित का हृदय', 'युग-धर्म', 'पेरिस की नर्तकी', 'स्वतन्त्रता', 'जागरण', 'दाँत का दर्द', 'अबला' पूजा का रुपया', 'सपूत', 'माता का हृदय', 'डोला', 'सेवासिंह', 'कम्यूनिस्ट सभा', 'मुन्शी जी का ब्याह', 'वेदखली', 'भ्रम', 'समर्पण', 'माता की सीख', 'पत्रकार' तथा 'सच्चा कवि' आदि इसी वर्ग के अन्तर्गत आती हैं। इनमे लेखक ने प्रसंगानुकूल पात्रो के चरित्र-चित्रण, वातावरण के चित्रण तथा व्यक्तिगत विचारो एव भावनाओ की अभिव्यक्ति के लिये यथास्थान कई प्रकार की शैलियो का प्रयोग करके कहानियो मे रोचकता लाने का प्रयास किया है अतः इन्हें मिश्र शैली मे रचित कहानियाँ कहा जा सकता है।

'कौशिक' जी की कुछ प्रमुख कहानियो का परिचय

'कौशिक' जी के कथा-साहित्य का वर्गीकरण करते हुए विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत आने वाली कहानियो की विशेषताओ का उल्लेख करने के पश्चात् उनकी कुछ प्रमुख कहानियो का परिचय देना उपयुक्त होगा जो उक्त सभी वर्गों मे से किसी न किसी का प्रतिनिधित्व करती हो। इस प्रकार से प्रमुख कहानियों का चयन करना एक कठिन समस्या है। प्रत्येक लेखक की कुछ रचनाएँ ऐसी होती हैं जो पाठको को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं इसलिए उन्हें लेखक की प्रमुख रचनाएँ स्वीकार कर लिया जाता है। विभिन्न आलोचको ने 'कौशिक' जी के कथा साहित्य पर प्रकाश डालते हुए जिन कहानियो का विशेष रूप से उल्लेख किया है वे ये हैं—'रक्षा बधन', 'ताई', 'वह प्रतिमा', 'उद्धार', 'विधवा', 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'लीडरी का पेशा', 'पेरिस की नर्तकी', 'माता का हृदय', 'मोह', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'अशिक्षित का हृदय', 'साध की होली', 'ढपोर शख', 'गवार', 'एप्रिल फूल', 'पथ-निर्देश', 'इक्के वाला', 'सच्चा कवि' तथा 'बन्ध्या'। ये सब कहानियाँ 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण कथा-साहित्य की कलागत तथा विषयगत विशेषताओं का ज्ञान कराने मे समर्थ हैं। विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत उनकी कहानियो के जिन गुणों का हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं वे सभी न्यूनाधिक रूप मे इन कहानियो मे मिलते हैं। इन सभी कहानियो का परिचय न देकर कुछ ऐसी कहानियो का परिचय देना उपयुक्त होगा जो इनके सभी वर्गों की प्रतिनिधि हो तथा अपने वर्ग विशेष मे आने वाली अन्य कहानियो से श्रेष्ठ हो। 'उद्धार' पेरिस की नर्तकी', 'वह प्रतिमा', 'ताई', स्वाभिमानी नमक हलाल', 'साध की होली', 'रक्षा बन्धन', 'एप्रिल फूल', 'लीडरी का पेशा', 'इक्केवाला 'मकान खाली है', तथा 'पथ निर्देश' आदि कहानियाँ 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य मे सर्वश्रेष्ठ स्थान रखती हैं तथा कहानीकार के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य की प्रमुख

प्रवृत्तियों तथा विशिष्टताओं को पाठकों के मस्तिष्क में प्रतिबिम्बित करने में समर्थ हो सकेंगी।

उद्धार

यह कहानी 'कौशिक' जी की सामाजिक कहानियों में अपना विशिष्ट स्थान रखती है, इसकी रचना समाज के पूँजीपति वर्ग की शोषण वृत्ति को लेकर की गई है। पूँजीपति अपने लाभ के लिए एक ओर श्रमिकों की मजदूरी में अधिकतम कटौती करता है, दूसरी ओर ग्राहकों से अधिकाधिक मूल्य प्राप्त कर महँगाई की स्थिति उपस्थित करता है। 'कौशिक' जी ने पूँजीपति वर्ग की इन दोनों प्रवृत्तियों का, कर्मचारियों द्वारा नई फर्म खोलकर उसमें श्रमिकों के लिए उचित पारिश्रमिक की व्यवस्था कर, समाधान प्रस्तुत किया है। अतः यह कहानी केवल समस्या का स्पष्टीकरण मात्र न रहकर नवीन कार्य प्रणाली का दृष्टिकोण भी सम्मुख रखती है। नई फर्म खोलने का क्रियात्मक सुझाव इस कहानी की वह विशेषता है जो सम्भवतः इससे पूर्व किसी अन्य कहानी में दृष्टिगत नहीं होती।

सुशीला की माँ गुलाबचन्द की फर्म में कपड़ों पर कशीदाकारी का कार्य करती हैं। गुलाबचन्द पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधि है जो अपने कारीगरों से कम कीमत में कपड़ों पर कशीदा करवा कर ग्राहकों को बहुत अधिक मूल्य पर विक्रय करता था। व्रजबिहारी नामक एक अन्य पात्र ने गुलाबचन्द की इस चाल पर दृष्टि डाली। उसने सुशीला की माँ द्वारा कशीदा किये हुए लहँगे को अपने मित्र कृष्णस्वरूप के घर में देखा था। सुशीला की माँ से पूछने पर जब उसे ज्ञात होता है कि उन्हें केवल आठ रुपये पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त हुए, जबकि गुलाबचन्द ने कृष्णस्वरूप से कशीदाकारी के चालीस रुपये प्राप्त किये तो वह कृष्णस्वरूप के सहयोग से एक अन्य फर्म 'कृष्ण ऐंड कम्पनी एम्ब्रायडर्स' खुलवाता है, जिसमें कारीगरों को पुरानी फर्मों से अधिक सुविधाएँ प्रदान करने की व्यवस्था की गई। एक विज्ञप्ति प्रकाशित की गई कि इस फर्म में कार्य करने वाले कारीगरों को उनके कार्य का आधा भाग मजदूरी-स्वरूप दिया जायेगा तथा फर्म के वार्षिक लाभ में से भी कुछ भाग दिया जायेगा। इन सुविधाओं के कारण पुरानी फर्मों के सब कर्मचारी इस नई फर्म में आ गये और गुलाबचन्द की तथा अन्य इसी प्रकार की पुरानी फर्में असफल हो गईं। सुशीला की माँ तथा अन्य सभी कारीगर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे।

इस कहानी में अन्तर्गत लेखक की सुधारवादी प्रवृत्ति प्रधान रूप से रही है जिसके फलस्वरूप समाज की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए नूतन आदर्श की कल्पना की गई है। इसके पात्र समाज के दो वर्ग विशेषों के प्रतिनिधि-स्वरूप समक्ष

ग्राते है जिनकी प्रवृत्तियो का विश्लेपण करते हुए लेखक ने ग्रपनी समाज सुधार की भावना को व्यक्त किया है। इस कहानी की रचना विशेषत वर्णनात्मक तथा कथोपकथन की शैली म हुई है। एक घटना को लेकर लेखक ने समाज के एक महत्वपूर्ण ग्रग पर दृष्टि डाली है ।

पेरिस की नर्तकी

प्रस्तुत राजनीतिक कहानी का महत्त्व कौशिक जी के सम्पूर्ण कथा-साहित्य मे एकाकी ही है । इसकी रचना फ्रास की उस राजनीतिक पृष्ठभूमि पर की गई है जब हिटलर की सेना फ्रास की भूमि को पदाक्रान्त करती हुई पेरिस के निकट पहुँच कर मेजिनो दीवार को क्षत विक्षत कर चुकी थी। जर्मन के युद्ध से ग्राक्रान्त फ्रास की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है ।

फ्रास क राजनीतिज्ञ दो प्रमुख विरोधी दलो मे विभक्त थे—पूँजीपति दल तथा साम्यवादी दल । पूँजीपति वर्ग ग्रपने ऐश ग्राराम मे लिप्त था तथा हिटलर के गुप्तचरो से मिला हुग्रा था। फ्रास की प्रसिद्ध नर्तकी एण्ड्री भी इसी दल के साथ मिलकर नृत्यकला को प्रशसा तथा युद्ध के विषय मे घृणास्पद विचार प्रस्तुत करके पूँजीपति वर्ग को हिटलर से सन्धि करने के लिए उकसाती है । प्रसिद्ध पूँजीपति मोशिये प्लेनशाने तथा उसके साथी एण्ड्री के विचारो से प्रभावित होकर हिटलर से सन्धि करने म ही ग्रपना कल्याण समभते हैं।[१] य योग युद्ध मे हिटलर से पराजित होकर उसके गुलाम बनने से भी भयभीत होते हैं तथा विजय होने मे भी उन्हे इस बात का भय बना रहता है कि विजय होने का श्रेय साम्यवादियो को ही मिलेगा ग्रौर देश की प्रभुसत्ता भी उन्ही के हाथ मे चली जायेगी।

साम्यवादी दल हिटलर से सन्धि करने के विरुद्ध था। इस दल का नेता मोशिये सावेलिये एण्ड्री की गतिविधिया पर पूर्ण रूप से दृष्टि रखता था । स्थिति गभीर थी, पूँजीपति दल के व्यक्ति जो स्वय को फ्रास का शासक समभते थे, रेनो सरकार को समाप्त कर पेतॉ सरकार स्थापित करने के पक्ष मे थे। इस कार्य मे उन्हें सफलता प्राप्त हुई ग्रौर साम्यवादी दल को हताश होना पडा। परन्तु देशभक्त

---

१ "यदि पराजित होकर हिटलर के गुलाम बने तब भी खतरा ग्रौर यदि विजयी हुए तब भी खतरा, इसलिए हमारा कल्याण हिटलर से सधि कर लेने में ही है।"—'पेरिस की नर्तकी'[कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ कौशिक', पृ०—८६ ।

मोशिये सावेलिये चुप रह जाने वाला व्यक्ति नही था। उसने अपने साथियो को एण्ड्री के पीछे लगा रखा था, जो जर्मन-शिविरो मे जाकर फ्रास के साथ विश्वासघात करने के प्रयत्न मे सलग्न थी। मोशिये सावेलिये के साथी अन्त मे इस नर्तकी-एण्ड्री को, जब वह एक जर्मन कैम्प से लौट रही थी, बन्दी बनाने मे सफल होते हैं और एक गुप्त स्थान पर लेजाकर प्राण दण्ड दे देते हैं।

एण्ड्री, एक प्रसिद्ध नर्तकी, रूप की साक्षात् प्रतिमा तथा एक विख्यात कलाकार थी। परन्तु इन गुणो का प्रयोग उसने देश-द्रोह के मार्ग मे किया अत सावेलिये उससे कहता है, "जो सौन्दर्य तथा कला हमे नपुसक बनाती है, हमारे शरीर मे कायरता का सचार करती है और इससे भी बढकर जो हमारे साथ, अपने देश के साथ विश्वासघात करती है, उस सौन्दर्य तथा कला का नष्ट हो जाना ही अच्छा है। हमे इस समय रगमच का सौन्दर्य, रगमच की कला की आवश्यकता नहीं है। हमे आवश्यकता है—युद्ध-क्षेत्र के सौन्दर्य और युद्धक्षेत्र की कला की।"[1]

पेरिस की युद्धकालीन परिस्थिति का यथार्थ चित्र उपस्थित करते हुए कहानीकार ने राजनीतिक पक्ष के दो पहलुओ पर प्रकाश डाला है तथा मिश्र शैली का प्रयोग करते हुए सुन्दर ढग से पात्रो के चारित्रिक गुणो का उद्घाटन किया है। सावेलिये के द्वारा कहानी के प्रारम्भ मे दृढता पूर्वक कही गई यह उक्ति—"मैं एण्ड्री को देखने आया हूँ, एण्ड्री का नाच देखने नही आया।"[2] उसके दृढ चरित्र तथा देश की स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न की ओर सकेत करती है। नर्तकी का चरित्र पेरिस की समकालीन नर्तकियो के अनुरूप ही प्रस्तुत किया है तथा यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया है। कहानी का अन्त बहुत सुन्दर है जिसमे देशभक्ति की स्पष्ट छाप दिखाई पडती है साथ ही कला की उपादेयता पर भी प्रकाश डाला गया है। कला के उद्देश्य का स्पष्टीकरण साम्यवादी नेता के शब्दो मे प्रस्तुत किया गया है। ऐसी कला जो राष्ट्र को विलासिता की ओर आकृष्ट करती हुई देश का पराधीनता की बेडियो मे जकड दे, कला नहीं कहला सकती।

प्रस्तुत कहानी मे लेखक का उद्देश्य देशद्रोह तथा देशप्रेम का समानान्तर चित्र उपस्थित करते हुए, देश की पराजय के कारण का चित्र प्रस्तुत करना तथा उसे दर

---

१. 'पेरिस की नर्तकी' [कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ '
२. " " "

करता रहा है। सावेलिये और एण्ड्री के द्वारा लेखक ने देशप्रेम तथा देशद्रोह का साकार चित्र उपस्थित करते हुए पराजय के कारण-एण्ड्री का वध करवा कर उद्देश्य की पूर्ति की है। युद्धकालीन परिस्थिति, उसके आतंक और जन-जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का वातावरण प्रस्तुत करने मे 'कौशिक' जी को असाधारण सफलता प्राप्त हुई है। यथास्थान वर्णनात्मक, नाटकीय तथा प्रवाहमयी शैली के प्रयोग से कहानी अत्यन्त रोचक बन गई है।

वह प्रतिमा

इस कहानी मे 'कौशिक' जी ने इतिवृत्त को प्रमुखता प्रदान करते हुए आत्मचरितात्मक शैली मे कहानी की रचना की है तथा समाज के पारिवारिक जीवन मे पति-पत्नी के पारस्परिक प्रेम-सम्बन्धी विषय को आधार बनाया है। पत्नी के अतिरिक्त पति की सुख-सुविधा का ध्यान रखने वाले कुछ अन्य व्यक्ति माँ, भाभी इत्यादि जब परिवार मे होते हैं तब पति-पत्नी के व्यवहार मे जो परिवर्तन आ जाता है, उस समस्या को लेकर कहानी लिखी गई है। कहानी का प्रमुख पात्र अपने मुँह से अपने जीवन की घटनाओ का वर्णन करता है उसके हृदय का अन्तर्द्वन्द्व पाश्चाताप के रूप मे व्यक्त हुआ है।

चमेली के राजयक्ष्मा रोग से पीडित हो जाने पर उसका पति उसकी ओर से उदासीन हो जाता है, क्योकि अब उसमे वह सौन्दर्य नही रहा था जो उसे अपनी ओर आकृष्ट कर सके। दूसरे वह इस भय से पत्नी से दूर रहने लगा कि कही रोग उसे न लग जाये। वह नशेबाजी आदि दुर्व्यसनो मे फँस गया। चमेली हर प्रकार से पति की सुख-सुविधा का ध्यान रखती परन्तु उसे कभी जीवन मे पत्नी की चिन्ता नही रही। चमेली ने उसे दूसरा विवाह करने की सलाह दी परन्तु उसने यह कह कर अस्वीकार कर दिया कि घरवाले उसे इस कार्य के लिये आज्ञा नही देंगे।

चमेली की दशा दिन-प्रतिदिन बिगडती जाती है और उसका अन्त समय निकट आ जाता है। तब उसके पति को उसकी चिन्ता होती है तथा इतने दिनो तक उससे विमुख रहने पर पश्चाताप होता है। अब उसे पत्नी में वही सौन्दर्य दिखाई पडता है जो उसकी स्वस्थावस्था मे था।[1] वह अपनी पत्नी के समक्ष अपनी भूल का

---

१. आज छः वर्ष पश्चात मुझे उसकी आँखों में उसके मुख पर वही सौन्दर्य दिखाई पडा, जो छः वर्ष पूर्व था।' ओफ ! मैंने कितना अनर्थ किया, जो इसकी ओर से इतना उदासीन हो गया।"—'चित्रशाला' [कहानी-संग्रह]—पृ० १२४-१२५।

प्रायश्चित्त करता है तथा उसे धैर्य बंधाने का प्रयत्न करता है, परन्तु चमेली को इस परिवर्तन से क्लेश होता है। वह पति के अपने प्रति प्रेम प्रकट करने पर मृत्यु से भय का अनुभव करती है इसलिए पति से वही उदासीनता का भाव रखने तथा अपने पुत्र शानू को कभी न डांटने का अनुरोध करती है। पति अन्त समय में पत्नी के प्रेम के मूल्य को पहचान पाता है। अब चमेली उसके लिए एक ऐसी प्रतिमा बन जाती है जिसकी स्मृति को वह जीवन भर नहीं भुला सकता।

प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि किसी व्यक्ति की वास्तविक पहचान उसकी मृत्यु के पश्चात् होती है। नष्ट होने पर ही वस्तु का मूल्य ज्ञात होता है। इस कहानी की कथा मानव-जीवन के यथार्थ धरातल से ली गई है। अत्यन्त करुण तथा कवित्वमय भाषा शैली में लेखक ने इसकी रचना की है। डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव ने इसके विषय में लिखा है—'वह प्रतिमा' शीर्षक कहानी घटना और उसके वैचित्र्य से उतनी ही दूर है और एक सूक्ष्म लाक्षणिकता से अनुप्राणित है। कथानक का आरम्भ भी मानसिक व्याकुलता के एक संकेत से होता है। तथा सम्पूर्ण कहानी एक संकेतात्मक पद्धति द्वारा अभिव्यक्त हो सकी है।"[1] कहानी-कला की दृष्टि से यह कहानी बहुत सुन्दर बन पड़ी है।

ताई

यह 'कौशिक' जी की प्रसिद्ध सामाजिक चरित्रप्रधान कहानी है जिसमें पारिवारिक जीवन के व्यक्तिगत पारस्परिक प्रेम सम्बन्ध की समस्या को लेकर उस निस्सन्तान स्त्री के चरित्र का चित्रण किया गया है जिसके मन में प्रतिक्षण दूसरे के बच्चों के प्रति वात्सल्य तथा घृणा का द्वन्द्व चलता रहता है।

रामेश्वरी के पति बाबू रामजीदास के छोटे भाई की दो सन्तानें हैं—पुत्र मनोहर तथा पुत्री चुन्नी। निस्सन्तान होने के कारण रामजीदास का स्नेह इन बच्चों के प्रति बहुत अधिक है। उन्हें सन्तान की कमी नहीं खटकती। परन्तु रामेश्वरी को उनका इन बच्चों के प्रति इतना स्नेह अच्छा नहीं लगता। कभी वह बच्चों से घृणा करती है कभी प्रेम। प्रारम्भ में मनोहर के यह कहने पर कि वह ताई को रेलगाड़ी में नहीं बिठाएगा, उसके क्रोध की सीमा नहीं रहती। वह बच्चों को गोदी से ढकेल देती है। इतने पर भी एकान्त में छत पर बच्चों को हँस-हँसकर खेलते हुए देखकर उन्हें प्यार किये बिना उसका मन नहीं मानता। उसके अन्तर्मन में बच्चों के

1. 'हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया'—पृ० ११४।

लिये प्रेम तथा ममत्व की जो भावना भरी हुई है वह अनुकूल अवसर प्राप्त कर प्रकट हो जाती है। परन्तु वह बच्चो के प्रति अपनी प्रेम-भावना को पति के समक्ष प्रकट करना नही चाहती थी। इसीलिए जब रामजीदास मनोहर के लिए रेलगाडी लेकर छत पर जाते हैं और रामेश्वरी को बच्चो को प्यार से गोद मे लिये हुए देखकर कह उठते हैं, "आज तो तुम बच्चो को बडा प्यार कर रही थी, इससे मालूम होता है कि तुम्हारे हृदय मे भी इनके प्रति कुछ प्रेम अवश्य है।"[1] तो वह क्रोधित होकर अपनी निर्बलता पति पर प्रकट हो जाने के कारण बच्चो को जली-कटी बातें सुनाती है। इसके अतिरिक्त वह नही चाहती थी कि रामजीदास उन बच्चो को इतना अधिक स्नेह करें। सन्तान की उत्कट लालसा के कारण उन्हे पति की उपेक्षा भी सहनी पडती है।[2] उसके मन मे अन्तर्द्वन्द्व पैदा होता है कि इन बच्चो के कारण ही उसके पति उसे कम प्रेम करते हैं और हर समय बुरा-भला कहते रहते हैं। उसके मस्तिष्क मे सन्तान का अभाव और पति के भाई की सतान के प्रति अनुराग की भावना-विषयक विचार चक्कर काटते रहते हैं।

एक दिन वह छत पर खडी थी। मनोहर पतंग मँगवाने का हठ करता है तो वह डाँट देती है, परन्तु अधिक हठ करने पर करुणापूर्वक सोचती है कि वह उसका पुत्र होता तो वह ससार की सबसे भाग्यवान स्त्री होती। तत्काल ही वह मनोहर को प्यार करने वाली थी कि वह कह उठता है "तुम हमे पतँग नहीं मँगवा दोगी, तो ताऊजी से कहकर तुम्हे पिटवावेंगे।" यह सुनकर वह क्रोधित होकर कहती हैं, "जा, कहदे अपने ताऊजी से। देखूँ, वह मेरा क्या कर लेंगे।"[3] मनोहर पतग देखने लगता है। कुछ ही क्षण पश्चात् एक पतग उनकी छत के छज्जे से होकर नीचे आँगन मे जा गिरती है। मनोहर उसे पकडने के लिए छज्जे पर जाता है और आँगन मे देखकर प्रसन्न होता है। परन्तु जैसे ही वह नीचे जाने के लिए शीघ्रता से घूमता है, पैर फिसल जाता है और वह नीचे गिरने से बचने के लिए मुँडेर को हाथ से पकड कर ताई को आवाज देता है, परन्तु रामेश्वरी सोचती हैं कि मरने दो पाप कट जाएगा। मनोहर के दोबारा आवाज देने पर वह व्याकुल होकर उसकी रक्षा के लिए दौडती है, इतने मे ही मनोहर के हाथ से मुँडेर छूट जाती है और वह नीचे गिर जाता है। रामेश्वरी चीख मारकर बेहोश होकर छज्जे पर गिर जाती है तथा ज्वर

---

१. 'चित्रशाला' [कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ५०।
२. "तुममे मुझे बच्चे ये कहीं अधिक प्यारे है।"—'चित्रशाला', पृ० ५१।
३ 'चित्रशाला'—पृ० ५३।

मे एक सप्ताह तक बेहोश पडी रहती है। इस स्थिति में कभी मनोहर को बचाने के लिए आवाज़ देती है तथा कभी पश्चाताप करती है कि वह स्वय बचाना चाहती तो बचा सकती थी। छज्जे से गिरने के कारण मनोहर के पैर मे चोट आ गई थी, जो कुछ ही दिनो मे ठीक हो गई। ज्वर से मुक्ति प्राप्त कर ताई मनोहर को देखने की इच्छा प्रकट करती है तथा घृणा त्यागकर उनबच्चों को अपने बच्चो के समान ही प्यार करने लगती है। वस्तुत ताई के चरित्र मे इस घटना के द्वारा लेखक ने आकस्मिक परिवर्तन ला दिया है। ताई का चरित्र एक महत्त्वपूर्ण चरित्र है। श्री राजनाथ शर्मा ने लिखा है—"ताई की स्पर्धा और स्नेह का मनोवैज्ञानिक द्वन्द्व यदि मनोविश्लेषण पद्धति क द्वारा किया जाता तो ताई का चरित्र हिन्दी-साहित्य के अद्वितीय चरित्रो मे गिना जाता।"[1]

प्रस्तुत कहानी में घटनाओ का आधिक्य नही है। प्रत्येक घटना ताई के मानसिक भावों के स्पष्टीकरण तथा उसके चरित्रगत परिवर्तन के लिए गु फित की गई है। इसमे कहानीकार ने यह प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया है कि "ममत्व से प्रेम उत्पन्न होता है और प्रेम से ममत्व।" आदर्श ताऊ और ताई के चरित्रो का निर्माण करते हुए प्रस्तुत परिस्थितियो मे उत्पन्न होने वाली पारिवारिक कलह और उसके दुष्परिणाम, प्रायश्चित तथा अन्त मे प्रेमपूर्ण वातावरण उपस्थित करके कथा को समाप्त कर दिया गया है। कहानी विषय की दृष्टि से अत्यन्त मार्मिक तथा रोचक है परन्तु इसमे वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया गया है जिससे इसका महत्त्व कुछ कम हो गया है। डॉ० सुरेश सिनहा के अनुसार—"यह कदाचित् यथार्थ पर आदर्शवाद की आयास प्रतिष्ठा करने के लिए ही किया गया है, जिससे इसम इति वृत्तात्मक गुणो का समावेश अधिक हो गया है। ..चरम सीमा के बाद भी भूमिका और उपसहार का सयोजन किया गया है और आदर्शवाद की पूर्ण एव स्पष्ट रूप में प्रतिष्ठापना की गई है।"[2]

स्वाभिमानी नमक हलाल

यह कहानी 'कौशिक' जी की चरित्र-प्रधान कहानियो मे अपना प्रमुख स्थान रखती है। इसमे एक स्वाभिमानी तथा स्वामिभक्त सेवक के चरित्र का अत्यन्त कुशलता के साथ चित्रण किया गया है। मटरूमल जी सेठ छगामल के स्वामिभक्त

---

[1] 'हिन्दी कहानियाँ [आलोचनात्मक अध्ययन]—पृ० १८८।
[2] "हिंदी कहानी : उद्भव और विकास'—पृ० ३७४।

मुनीम थे। अपनी मृत्यु से पूर्व उन्होंने अपने पुत्र चुन्नूमल को उनके संरक्षण में सौंप-कर पुत्र से उनकी आज्ञा पालन करने को कहा। परन्तु छगामल की मृत्यु के कुछ दिनों पश्चात् चुन्नूमल ने स्वयं को मटरूमल जी के प्रभाव से मुक्त कर लिया और मटरूमल जी नौकरी से पृथक हो गए। चुन्नूमल ने मटरूमल जी को उनकी अब तक की सेवाओं के उपलक्ष्य में पेंशन देनी चाही परन्तु स्वाभिमानी मटरूमल ने पेंशन लेने से इन्कार कर दिया।

चुन्नूमल मटरूमल जी के प्रभाव से मुक्त होकर अपने मित्रों की आवारा चौकड़ी में फँस गया और सेठ छगामल जी का एकत्रित किया हुआ पर्याप्त धन उसने नष्ट कर डाला। परिणामस्वरूप एक दिन किसी व्यक्ति के दो लाख रुपयों की दर्शनी हुण्डी लेकर आने पर उसका तत्काल ही भुगतान करने में वह असमर्थ हो गया। इस विकट स्थिति में चुन्नूमल को मटरूमल की याद आई। वह उसके पास गया तो मटरूमल जी तुरन्त कार्यालय में आये और फर्म की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए उन्होंने अत्यन्त कुशलता के साथ हुंडी को अपने काँपते हुए हाथों से अँगीठी पर गिराकर जला दिया। साथ ही हुंडी लाने वाले से कहा, 'कोई चिन्ता नहीं, तुम हुंडी की नकल लाओ, और भुगतान ले जाओ। अभी ले आओ, अभी भुगतान मिल जाय।''[1] इस प्रकार मटरूमल जी ने अपनी व्यावहारिक कुशलता के फलस्वरूप लाला छगामल की पुरानी साख को नष्ट होने से बचा लिया। हुंडी आने तक भुगतान करने के लिए रुपये का प्रबन्ध करने का समय मिल गया, अन्यथा ऐसी परिस्थिति में फर्म दिवालिया हो जाती।

कहानीकार ने एक स्वामिभक्त, निपुण मुनीम के स्वाभिमानी चरित्र का बड़ी कुशलता के साथ चित्रण किया है। स्वाभिमान के कारण ही वह चुन्नूमल के एक बार कहने पर नौकरी छोड़ देता है, पेंशन स्वीकार नहीं करता तथा अन्त में चुन्नूमल के रोकने पर भी नहीं रुकता, कार्य समाप्त करते ही चला जाता है। कहानी आद्योपान्त बहुत रोचक है।

साध की होली

प्रस्तुत कहानी समाज के जमींदार वर्ग पर आधारित चरित्र प्रधान कहानी है तथा इसकी रचना मिश्र शैली में हुई है। इस कहानी में 'कौशिक' जी ने सज्जाद हुसैन के रूप में एक अय्याश और नृशंस जमींदार के चरित्र का चित्रण किया है।

---

१. 'चित्रशाला' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक'—पृ० २१।

सज्जादहुसैन एक दुश्चरित्र व्यक्ति था जो अपनी जमींदारी के निर्धन काश्तकारों की बहू-बेटियों को कुदृष्टि से देखता तथा उन्हें फुसलाने का प्रयत्न करता था।

एक दिन शंकरबख्शसिंह की पत्नी को, जब वह अकेली मार्ग में आ रही थी, सज्जादहुसैन ने घेर लिया और फुसलाने का प्रयत्न किया। शंकरबख्शसिंह की पत्नी एक अच्छे चरित्र वाली स्त्री थी, उसपर जमींदार की बातों का कोई प्रभाव न पड़ा, घर जाकर उसने इस घटना की सूचना पति को दी, उसके पति में सज्जादहुसैन के विरुद्ध आवाज उठाने का साहस नहीं था। इसलिए उसने बात को दबाने के लिए पत्नी से कहा, "अब तुम चिंता मत करो, तुम्हारे साथ कल से मुहल्ले की स्त्रियाँ जाया करेंगी।"[1]

शंकरबख्शसिंह पत्नी को आश्वासन देकर संतुष्ट हो गया परन्तु पत्नी के हृदय में जमींदार के प्रति क्रोध की ज्वाला धधकती रही। एक दिन जमींदार के द्वारा भेजी हुई एक वृद्धा ने शंकरबख्शसिंह की पत्नी के पास आकर कहा कि जमींदार ने कहलवाया है, "सीधी तरह मान जायेगी, तो निहाल कर देंगे, नहीं तो बड़ी दुर्दशा कराएंगे, रात में जबरदस्ती उठवा मँगाएँगे।"[2] शंकरबख्शसिंह की पत्नी ने क्रोध में उत्तर दिया कि अभी उसके बाप भाई जीवित हैं यदि जमींदार उसे बहुत परेशान करेंगे तो पछताएँगे तथा उस वृद्धा को कभी अपने पास आने का साहस न करने के लिए कहा।

उक्त घटना के तीन दिन पश्चात् होली का त्यौहार था। शंकरबख्शसिंह की पत्नी के देवर—रामसिंह ने होली से एक दिन पूर्व भाभी से होली खेलने के विषय में वार्तालाप किया तो वह बोली, "मेरे साथ होली खेलने को रंग कहाँ पाओगे?" देवर ने इस बात का रहस्य ज्ञात किया तो भाभी ने जमींदार की सब बातें बता दीं। देवर ने भाभी को आश्वासन देते हुए कहा, "तुमसे होली खेलने की साध है, उसे पूरी करके छोड़ूँगा चाहे जो हो, चाहे प्राण ही क्यों न चले जायें।"

अगले दिन देवर से पहले शंकरबख्शसिंह पत्नी के साथ होली खेलने आता है तो उसकी पत्नी कहती है कि वह पहले देवर के साथ होली खेलेगी। उसी समय देवर जमींदार के रक्त से भरा लोटा लेकर अपनी भाभी के साथ होली खेलने के लिए आता है और होली खेलकर अपनी साध पूरी करता है। पुलिस आ जाती है और रामसिंह को भाभी से सदैव के लिये विदा लेकर जाना पड़ता है।

---

१ 'साध का होली' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ ६-७।
२. " " " " पृष्ठ ६।

प्रस्तुत कहानी मे 'कौशिक' जी ने देवर भाभी के पवित्र स्नेह तथा साहस-पूर्ण चरित्रो का चित्रण किया है। देवर रामसिंह भाभी पर कुदृष्टि रखने वाले जमीदार सज्जादहुसैन का सहार कर भाभी के अपमान का प्रतिशोध लेता है तथा उसके रक्त से अपनी भाभी के साथ होली खेलकर अपनी तथा भाभी की साध पूरी करता है। कहानी का शीर्षक इसी घटना पर आधारित है तथा बहुत उपयुक्त है। भारतीय नारी के गौरव की प्रतिष्ठा करते हुए कहानीकार ने जमीदारी युग के व्यभिचारी और नपुसक चरित्रो का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत किया है। ठाकुर वख्शसिंह के रूप मे एक ऐसे दुर्बल चरित्र को प्रस्तुत किया है जिसके स्वाभिमान को जमीदारी निरकुशता ने इस हद तक कुचल दिया है कि अपनी पत्नी के अपमान की बात सुनकर भी उसे क्रोध नही आता। जमीदारी युग के वातावरण को प्रस्तुत करने मे लेखक को बहुत सफलता मिली है। एक जमीदार है दुश्चरित्र और उसकी दुश्चरित्रता के प्रति विद्रोह करने की शक्ति उस ग्राम के किसी व्यक्ति मे नही है। ग्राम-निवासी उसके द्वारा किये गये अत्याचारो को सहन करते है, उसके विरुद्ध आवाज़ नही उठा पाते। इस कुठित वातावरण मे रामसिंह और उसकी भौजी को साहसपूर्वक जमीदार के विरुद्ध खडे करके लेखक ने महत्वपूर्ण चरित्रो की अवतारणा की है। कहानी बहुत रोचक है जिसका प्रभाव पाठक के मस्तिक पर बहुत देर तक बना रहता है।

रक्षा बन्धन

यह 'कौशिक' जी की सर्वप्रथम मौलिक घटनाप्रधान कहानी है जिसका विषय समाज के धरातल से लिया गया है तथा प्राचीन युग की काल्पनिकता के स्थान पर यथार्थ मे आने का प्रयास किया गया है। यद्यपि दैवी घटनाओ तथा सयोग तत्वो के प्रयोग के कारण इस कहानी मे प्राचीनता का आभास मिलता है क्योकि जिस युग मे इसकी रचना हुई उस समय कहानियो मे इन्ही तत्वो की प्रधानता रहती थी परन्तु लेखक का प्रथम मौलिक प्रयास होने के कारण उनके कथा साहित्य मे इस कहानी का विशेष महत्व है। कथा इस प्रकार है—

कहानी का प्रमुख पात्र घनश्याम धनोपार्जन के उद्देश्य से दक्षिण भारत के किसी नगर मे चला जाता है। वहाँ से धन कमाकर जब वह अपने घर लौटता है तो उसकी माँ तथा बहिन उसे वहाँ नहीं मिलती। घनश्याम ने उन्हे छोडकर जाने के पश्चात् उनकी कोई खोज खबर नही रखी, अत वे उन्नाव छोडकर कानपुर मे निवास करने लगी। घनश्याम सारे उन्नाव मे उनकी खोज करके हार जाता है परन्तु उसे निराश होना पडता है।

एक दिन कानपुर के किसी मुहल्ले से गुजरते हुए उसकी दृष्टि एक लड़की पर पड़ी जो हाथ में कोई वस्तु लिये हुए अपने घर के द्वार पर खड़ी थी। घनश्याम आगे बढ़कर जैसे ही उसके निकट पहुँचा तो लड़की ने करुणापूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा। घनश्याम ने उसके अश्रुपूरित नेत्रों को देखकर पूछा, 'बेटी क्यों रोती हो ?''[1] लड़की ने केवल 'राखी' शब्द कहा और घनश्याम ने उसका भाव समझकर दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया। लड़की ने प्रसन्न होकर उसके हाथ में राखी बाँध दी। घनश्याम ने उसे दो रुपये देने चाहे, परन्तु वह केवल पैसे लेना चाहती थी। तब उसने आग्रहपूर्वक रुपये और चार आने पैसे उसे दे दिये। उसी समय मकान के अन्दर से किसी ने लड़की (सरस्वती) को अन्दर बुलाया और वह लड़की चली गई।

तत्पश्चात घनश्याम लखनऊ में जाकर रहने लगा। बहुत खोज करने पर भी वह अपनी माँ तथा बहिन को ढूँढ पाने में असमर्थ रहा। वह अपने मित्र अमरनाथ से कभी-कभी इस प्रसंग पर वार्तालाप कर लेता था। राखी वाली घटना भी उसने अमरनाथ को बता दी थी।

पाँच वर्ष पश्चात् अमरनाथ उसके विवाह के लिए एक कन्या देखकर आता है और घनश्याम से उस लड़की से विवाह करने का आग्रह करता है। लड़की की माँ लड़के को देखने की इच्छुक थी तथा घनश्याम ने भी लड़की को देखने की इच्छा प्रकट की। अमरनाथ घनश्याम को साथ लेकर लड़की के घर जाता है तो घनश्याम को देखकर लड़की की माँ पहिचान लेती हैं कि वही उनका पुत्र है जो कुछ वर्ष पूर्व उनसे बिछुड़ गया था और देखते ही वह अचेत हो जाती हैं तथा लड़की 'भैया-भैया' कहती हुई उससे लिपट जाती है। यह वही लड़की थी जिसने पाँच वर्ष पूर्व घनश्याम के हाथ में राखी बाँधी थी। प्रो० वासुदेव के अनुसार, "बालिका सरस्वती से घनश्याम का मिलन एक 'संयोग' है और फिर युवती सरस्वती से घनश्याम के मिलने को दैवी संयोग कहा जायगा। इस तरह की कहानी बड़ी अस्वाभाविक होती है।"[2] कहानी-लेखक का प्रमुख उद्देश्य नाटकीय प्रसंगों की सृष्टि करना रहता है, जिसके लिए दैव घटनाओं और संयोगों का किसी न किसी रूप में आश्रय लेना पड़ता है। इस दृष्टि से डॉ० श्रीकृष्णलाल के अनुसार, "कौशिक की कहानी 'रक्षा-बन्धन' में संयोग और दैव-घटना से ही एक मनोरंजक कहानी बन गई है।"[3] कुछ आलोचकों ने इस

---

१ 'रक्षाबन्धन [कल्लो मञ्जरी]'—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ-१६०।
२ 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'—पृ०-१३६।
३ 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास'—पृ० ३२७।

प्रस्तुत कहानी में 'कौशिक' जी ने देवर भाभी के पवित्र स्नेह तथा साहस-पूर्ण चरित्रों का चित्रण किया है। देवर रामसिंह भाभी पर कुदृष्टि रखने वाले जमीदार सज्जादहुसैन का संहार कर भाभी के अपमान का प्रतिशोध लेता है तथा उसके रक्त से अपनी भाभी के साथ होली खेलकर अपनी तथा भाभी की साध पूरी करता है। कहानी का शीर्षक इसी घटना पर आधारित है तथा बहुत उपयुक्त है। भारतीय नारी के गौरव की प्रतिष्ठा करते हुए कहानीकार ने जमीदारी युग के व्यभिचारी और नपुसक चरित्रों का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत किया है। शंकर-बख्शसिंह के रूप मे एक ऐसे दुर्बल चरित्र को प्रस्तुत किया है जिसके स्वाभिमान को जमीदारी निरकुशता ने इस हद तक कुचल दिया है कि अपनी पत्नी के अपमान की बात सुनकर भी उसे क्रोध नही आता। जमीदारी युग के वातावरण को प्रस्तुत करने मे लेखक को बहुत सफलता मिली है। एक जमीदार है दुश्चरित्र और उसकी दुश्चरित्रता के प्रति विद्रोह करने की शक्ति उस ग्राम के किसी व्यक्ति मे नही है। ग्राम-निवासी उसके द्वारा किये गये अत्याचारों को सहन करते हैं, उसके विरुद्ध आवाज नही उठा पाते। इस कुंठित वातावरण मे रामसिंह और उसकी भौजी को साहसपूर्वक जमीदार के विरुद्ध खड़े करके लेखक ने महत्वपूर्ण चरित्रों की अवतारणा की है। कहानी बहुत रोचक है जिसका प्रभाव पाठक के मस्तिक पर बहुत देर तक बना रहता है।

रक्षा बन्धन

यह 'कौशिक' जी की सर्वप्रथम मौलिक घटनाप्रधान कहानी है जिसका विषय समाज के धरातल से लिया गया है तथा प्राचीन युग की काल्पनिकता के स्थान पर यथार्थ म आने का प्रयास किया गया है। यद्यपि दैवी घटनाओं तथा सयोग तत्वों के प्रयोग के कारण इस कहानी मे प्राचीनता का आभास मिलता है क्योंकि जिस युग मे इसकी रचना हुई उस समय कहानियो मे इन्ही तत्वों की प्रधानता रहती थी परन्तु लेखक का प्रथम मौलिक प्रयास होने के कारण उनके कथा साहित्य मे इस कहानी का विशेष महत्व है। कथा इस प्रकार है—

कहानी का प्रमुख पात्र घनश्याम धनोपार्जन के उद्देश्य से दक्षिण भारत के किसी नगर मे चला जाता है। वहाँ से धन कमाकर जब वह अपने घर लौटता है तो उसकी माँ तथा बहिन उसे वहाँ नहीं मिलती। घनश्याम ने उन्हे छोड़कर जाने के पश्चात् उनकी कोई खोज खबर नही रखी, अत वे उन्नाव छोड़कर कानपुर मे निवास करने लगी। घनश्याम सारे उन्नाव में उनकी खोज करके हार जाता है परन्तु उसे निराश होना पड़ता है।

एक दिन कानपुर के किसी मुहल्ले से गुजरते हुए उसकी दृष्टि एक लड़की पर पड़ी जो हाथ मे कोई वस्तु लिये हुए अपने घर के द्वार पर खड़ी थी। घनश्याम आगे बढ़कर जैसे ही उसके निकट पहुँचा तो लड़की ने करुणापूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा। घनश्याम ने उसके अश्रुपूरित नेत्रों को देखकर पूछा, "बेटी क्यों रोती हो ?"[१] लड़की ने केवल 'राखी' शब्द कहा और घनश्याम ने उसका भाव समझकर दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया। लड़की ने प्रसन्न होकर उसके हाथ मे राखी बाँध दी। घनश्याम ने उसे दो रुपये देने चाहे, परन्तु वह केवल पैसे लेना चाहती थी। तब उसने आग्रहपूर्वक रुपये और चार आने पैसे उसे दे दिये। उसी समय मकान के अन्दर से किसी ने लड़की (सरस्वती) को अन्दर बुलाया और वह लड़की चली गई।

तत्पश्चात् घनश्याम लखनऊ मे आकर रहने लगा। बहुत खोज करने पर भी वह अपनी माँ तथा बहिन को ढूँढ पाने मे असमर्थ रहा। वह अपने मित्र अमरनाथ से कभी-कभी इस प्रसग पर वार्तालाप कर लेता था। राखी वाली घटना भी उसने अमरनाथ को बता दी थी।

पाँच वर्ष पश्चात् अमरनाथ उसके विवाह के लिए एक कन्या देखकर आता है और घनश्याम से उस लड़की से विवाह करने का आग्रह करता है। लड़की की माँ लड़के को देखने की इच्छुक थी तथा घनश्याम ने भी लड़की को देखने की इच्छा प्रकट की। अमरनाथ घनश्याम को साथ लेकर लड़की के घर जाता है तो घनश्याम को देखकर लड़की की माँ पहिचान लेती हैं कि यही उनका पुत्र है जो कुछ वर्ष पूर्व उनसे बिछुड़ गया था और देखते ही वह अचेत हो जाती हैं तथा लड़की 'भैया-भैया' कहती हुई उससे लिपट जाती है। यह वही लड़की थी जिसने पाँच वर्ष पूर्व घनश्याम के हाथ में राखी बाँधी थी। प्रो० वासुदेव के अनुसार, "बालिका सरस्वती से घनश्याम का मिलन एक 'संयोग' है और फिर युवती सरस्वती से घनश्याम के मिलने को दैवी संयोग कहा जायगा। इस तरह की कहानी बड़ी अस्वाभाविक होती है।"[२] कहानी-लेखक का प्रमुख उद्देश्य नाटकीय प्रसगों की सृष्टि करना रहता है, जिसके लिए दैव घटनाओं और सयोगों का किसी-न किसी रूप मे आश्रय लेना पड़ता है। इस दृष्टि से डॉ० श्रीकृष्णलाल के अनुसार, "कौशिक की कहानी 'रक्षा-बन्धन' मे सयोग और दैव-घटना से ही एक मनोरजक कहानी बन गई है।"[३] कुछ आलोचकों ने इस

---

१ 'रक्षाबन्धन' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ-१६० ।
२ 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'—पृ०-१३६ ।
३. 'आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास'—पृ०-३२७ ।

प्रस्तुत कहानी मे 'कौशिक' जी ने देवर भाभी के पवित्र स्नेह तथा साहस-पूर्ण चरित्रो का चित्रण किया है। देवर रामसिंह भाभी पर कुदृष्टि रखने वाले जमीदार सज्जादहुसैन का संहार कर भाभी के अपमान का प्रतिशोध लेता है तथा उसके रक्त से अपनी भाभी के साथ होली खेलकर अपनी तथा भाभी की साध पूरी करता है। कहानी का शीर्षक इसी घटना पर आधारित है तथा बहुत उपयुक्त है। भारतीय नारी के गौरव की प्रतिष्ठा करते हुए कहानीकार ने जमीदारी युग के व्यभिचारी और नपुसक चरित्रो का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत किया है। ठाकुर-वरशसिंह के रूप म एक ऐसे दुर्बल चरित्र को प्रस्तुत किया है जिसके स्वाभिमान को जमीदारी निरकुशता ने इस हद तक कुचल दिया है कि अपनी पत्नी के अपमान की बात सुनकर भी उसे क्रोध नहीं आता। जमीदारी युग के वातावरण को प्रस्तुत करने मे लेखक को बहुत सफलता मिली है। एक जमीदार है दुश्चरित्र और उसका दुश्चरित्रता के प्रति विद्रोह करने की शक्ति उस ग्राम के किसी व्यक्ति मे नही है। ग्राम-निवासी उसके द्वारा किये गये अत्याचारो को सहन करते हैं, उसके विरुद्ध आवाज नही उठा पाते। इस कुठित वातावरण म रामसिंह और उसकी भाभी को साहसपूर्वक जमीदार के विरुद्ध खडे करके लेखक ने महत्वपूर्ण चरित्रो की अवतारणा की है। कहानी बहुत रोचक है जिसका प्रभाव पाठक के मस्तिष्क पर बहुत देर तक बना रहता है।

रक्षा-बन्धन

यह 'कौशिक' जी की सर्वप्रथम मौलिक घटनाप्रधान कहानी है जिसका विषय समाज के धरातल से लिया गया है तथा प्राचीन युग का काल्पनिकता के स्थान पर यथार्थ म आने का प्रयास किया गया है। यद्यपि दैवी घटनाओ तथा सयाग तत्त्वो के प्रयोग के कारण इस कहानी मे प्राचीनता का आभास मिलता है क्योकि जिस युग मे इसकी रचना हुई उस समय कहानियो मे इन्ही तत्वो की प्रधानता रहती थी परन्तु लेखक का प्रथम मौलिक प्रयास हाने के कारण उनके कथा साहित्य मे इस कहानी का विशेष महत्व है। कथा इस प्रकार है—

कहानी का प्रमुख पात्र घनश्याम धनोपार्जन के उद्देश्य से दक्षिण भारत के किसी नगर मे चला जाता है। वहाँ से धन कमाकर जब वह अपने घर लौटता है ता उसकी माँ तथा बहिन उसे वहाँ नही मिलती। घनश्याम ने उन्हे छोडकर जाने के पश्चात् उनकी कोई खोज खबर नही रखी, अत वे उन्नाव छोडकर कानपुर मे निवास करने लगी। घनश्याम सारे उन्नाव में उनकी खोज करते हार जाता है परन्तु उसे निराश होना पडता है।

एक दिन कानपुर के किसी मुहल्ले से गुजरते हुए उसकी दृष्टि एक लड़की पर पड़ी जो हाथ में कोई वस्तु लिये हुए अपने घर के द्वार पर खड़ी थी। घनश्याम आगे बढ़कर जैसे ही उसके निकट पहुँचा तो लड़की ने करुणापूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा। घनश्याम ने उसके अश्रुपूरित नेत्रों को देखकर पूछा, "बेटी क्यों रोती हो ?"[1] लड़की ने केवल 'राखी' शब्द कहा और घनश्याम ने उसका भाव समझकर दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया। लड़की ने प्रसन्न होकर उसके हाथ में राखी बाँध दी। घनश्याम ने उसे दो रुपये देने चाहे, परन्तु वह केवल पैसे लेना चाहती थी। तब उसने आग्रहपूर्वक रुपये और चार आने पैसे उसे दे दिये। उसी समय मकान के अन्दर से किसी ने लड़की (सरस्वती) को अन्दर बुलाया और वह लड़की चली गई।

तत्पश्चात् घनश्याम लखनऊ में जाकर रहने लगा। बहुत खोज करने पर भी वह अपनी माँ तथा बहिन को ढूँढ पाने में असमर्थ रहा। वह अपने मित्र अमरनाथ से कभी-कभी इस प्रसंग पर वार्तालाप कर लेता था। राखी वाली घटना भी उसने अमरनाथ को बता दी थी।

पाँच वर्ष पश्चात् अमरनाथ उसके विवाह के लिए एक कन्या देखकर आता है और घनश्याम से उस लड़की से विवाह करने का आग्रह करता है। लड़की की माँ लड़के को देखने की इच्छुक थी तथा घनश्याम ने भी लड़की को देखने की इच्छा प्रकट की। अमरनाथ घनश्याम को साथ लेकर लड़की के घर जाता है तो घनश्याम को देखकर लड़की की माँ पहिचान लेती हैं कि यही उनका पुत्र है जो कुछ वर्ष पूर्व उनसे बिछुड़ गया था और देखते ही वह अचेत हो जाती हैं तथा लड़की 'भैया-भैया' कहती हुई उससे लिपट जाती है। यह वही लड़की थी जिसने पाँच वर्ष पूर्व घनश्याम के हाथ में राखी बाँधी थी। प्रो० वासुदेव के अनुसार, "बालिका सरस्वती से घनश्याम का मिलन एक 'संयोग' है और फिर युवती सरस्वती से घनश्याम के मिलने को दैवी संयोग कहा जायगा। इस तरह की कहानी बड़ी अस्वाभाविक होती है।"[2] कहानी-लेखक का प्रमुख उद्देश्य नाटकीय प्रसंगों की सृष्टि करना रहता है, जिसके लिए दैव घटनाओं और संयोगों का किसी न किसी रूप में आश्रय लेना पड़ता है। इस दृष्टि से डॉ० श्रीकृष्णलाल के अनुसार, "कौशिक की कहानी 'रक्षा-बन्धन' में संयोग और दैव-घटना से ही एक मनोरंजक कहानी बन गई है।"[3] कुछ आलोचकों ने इस

---

१ 'रक्षाबन्धन' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ-१६० ।
२ 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'—पृ०-१३६ ।
३. 'आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास'—पृ० २२७ ।

कहानी को चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की 'उसने कहा था' कहानी के समकक्ष रखा है।

एप्रिल फूल

प्रस्तुत कहानी की रचना एक हास्यप्रधान सामाजिक घटना के आधार पर की गई है। इसमे 'कौशिक' जी ने एक ओर ऐसे व्यक्ति का चरित्र उपस्थित किया है जो अत्यन्त सीधा होने पर भी अपने को बहुत चालाक प्रदर्शित करना चाहता है और दूसरी ओर उन व्यक्तियो पर व्यग्य करना है जो सदैव दूसरो को नीचा दिखाने के प्रयत्न मे लगे रहते हैं।

प० श्यामनाथ एक सीधे-सादे व्यक्ति हैं, परन्तु यह दिखाने का प्रयत्न करते हैं कि वह सीधे नही वरन् चालाक हैं।[1] उनके मित्र हर समय उनसे उलटी-सीधी बातें करके उन्हें बुद्धू बनाने के प्रयत्न मे लगे रहते है। एक दिन वे प० श्यामनाथ जी से हठ करते हैं कि वह अपनी पत्नी को उन्हें दिखाएँ। प० श्यामनाथ जी तैयार हो जाते हैं और पत्नी को भी इसके लिए तैयार कर लेते हैं। मित्र पत्नी को देखने के लिए पहली अप्रैल का दिन रखते हैं तथा प० श्यामनाथ को पहली अप्रैल न बताकर दिन का नाम लेकर कहते हैं कि वे वृहस्पतिवार को उनके घर आएँगे। मित्रो ने पहले तो सोचा कि वे श्यामनाथ की पत्नी के अपने समक्ष आने पर मुँह देखे बिना ही 'एप्रिल फूल' कह देंगे, परन्तु फिर सोचा कि एप्रिल फूल तो वे श्यामनाथ को हमेशा ही बनाते हैं पत्नी के दर्शन अवश्य करेंगे।

श्यामनाथ की पत्नी अत्यन्त समझदार तथा चालाक स्त्री थी। उसने पति के मित्रो का एप्रिल फूल बनाने का प्रोग्राम बनाया और उन मित्रो की पत्नियो को पहले से ही अपने घर बुला लिया जो उस दिन उनके घर आने वाले थे। जब मित्र आते हैं तो भोजन करने से पूर्व पत्नी को देखने का निश्चय होता है। जैसे ही मित्र श्यामनाथ की पत्नी के कमरे मे प्रवेश करते हैं तो उनकी पत्नियाँ तो शान्त बैठी रहती हैं, श्यामनाथ की पत्नी कहती है, "एप्रिल फूल"। तीनो मित्र केवल अपनी-अपनी पत्नियो को ही पहचान पाते हैं और देखते ही कमरे से बाहर हो जाते हैं। तत्पश्चात् श्यामनाथ की पत्नी पति को इसका रहस्य बताती है कि उनके मित्रो मे कोई भी चारो स्त्रियो मे से न तो उसे पहचान पाया और न ही वे एक-दूसरे की पत्नियो को जानते थे, अत. केवल अपनी-अपनी पत्नियो को ही देखकर चले गये। इस प्रकार श्यामनाथ

---

१. "मैं जरा टेढ़ा आदमी हूँ, मेरे साथ जरा सँभल कर बातचीत कीजिए। समझे ?"—'एप्रिलफूल' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १५८।

की चतुर स्त्री ने सबका एप्रिल-फूल बना दिया और मित्रवर्ग न भोजन कर सका न उसके दर्शन।

यह कहानी 'कौशिक' जी की हास्यप्रधान कहानियों में सर्वश्रेष्ठ है। सम्पूर्ण कहानी में हास्यात्मक वातावरण बना रहता है तथा आदि से अन्त तक कौतूहल की प्रधानता है। अन्त में जिज्ञासा की शान्ति होती है। कहानी अत्यन्त रोचक है। इसमें हास्य रस की अद्भुत व्यंजना द्वारा पाठकों के मनोरंजन के लिए अच्छा विषय उपस्थित किया गया है। कथोपकथनों के सुन्दर प्रयोग तथा बोलचाल की साधारण भाषा ने कहानी को और भी सजीव बना दिया है।

लीडरी का पेशा

इतिवृत्तात्मक शैली में रचित इस कहानी में 'कौशिक' जी ने समाज के ऐसे व्यक्तियों के चरित्रों पर प्रकाश डाला है जो साधारण शिक्षा प्राप्त कर नौकरी न मिलने पर नेतागिरी को ही पेशे के रूप में अपनाते हैं तथा समाज-सुधार के लिए एकत्रित चन्दे का उपभोग अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करते हैं। 'कौशिक' जी ने अपनी अधिकांश कहानियों में व्यंग्य की कलात्मक पुट दी है। समाज के ऐसे पात्रों की लेखक ने खूब बखिया उधेड़ी है जिनके जीवन में वास्तविकता की अपेक्षा पोल अधिक है। पं० उमादत्त शुक्ल 'कौशिक' जी की दृष्टि में ऐसे ही प्राणी हैं जो तीन बार एफ० ए० में अनुत्तीर्ण होकर नौकरी प्राप्ति का भरसक प्रयत्न करने पर भी असफल रहने पर 'लीडरी का पेशा' अपनाने का विचार करते हैं। इस कार्य में उन्हें अधिक सुगमता दिखाई देती है, क्योंकि इसके लिए न तो डिग्री की आवश्यकता है और न योग्यता की।

नेता बनने का निश्चय कर पंडित उमादत्त शुक्ल इस कार्य में जुट गये। उन्होंने एक लीग की स्थापना की और उसके नाम पर प्राप्त धन को जी खोलकर अपने लिये व्यय किया। किसी ने कुछ पूछा तो कह दिया कि नेता लोग अच्छा भोजन न करें तो अस्वस्थ हो जायें और अधिक परिश्रम करने में असमर्थ हो जायें। इस लिये "नेता का जितना ही आराम और सुख दिया जाय, अच्छा है, क्योंकि जितने ही अधिक दिन तक वह जीवित रहेगा, उतना ही उससे देश को लाभ पहुँचेगा।"[1] प्रश्नकर्त्ता उनकी ऐसी ऐसी दलीलें सुनकर मौन हो जाते थे।

---

१ 'चित्रशाला' [कहानी-संग्रह]—पृ० ६३।

तक कहीं भी वर्णनात्मक या अन्य शैलियों का प्रयोग नहीं हुआ है। कहानी के आरम्भ में नाटक की भाँति पात्रों का परिचय दिया गया है[1] तथा सम्पूर्ण कथा पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप से ही अग्रसर होती है। वार्तालाप के मध्य में नाटक की भाँति अभिनयात्मक संकेत भी दिये गये हैं, जिन्होंने कहानी में पर्याप्त नाटकीयता ला दी है।

"रामनाथ—(कलम गिरने की आवाज सुनकर) क्या गिरा ?

शान्ता—मैंने तो देखा नहीं।

रामनाथ—कलम गिर गया। (उठ कर खड़ा हो जाता है) किधर गया ! अरे ! (कलम पैर के नीचे दब कर कुचल जाता है) ओफ कलम तो गया। क्या मुसीबत है। तुम बैठी तमाशा देख रही हो।"[2]

कहानी की कथा मकान को किराये पर उठाने की एक सामाजिक समस्या पर आधारित है। रामनाथ का एक मकान खाली पड़ा है जिसमें कोई व्यक्ति नहीं रहता। उनकी पत्नी शान्ता उस मकान को किराये पर उठाने का परामर्श देती है ताकि उससे २० रुपये मासिक किराया प्राप्त हो सके। रामनाथ को समझ नहीं आता कि किरायेदार लाने की समस्या को कैसे हल करें। उनके नौकर बदलू से एक किरायेदार ने आने का वायदा किया हुआ था, परन्तु वह नहीं आया। तत्पश्चात् बदलू ने खाली मकान पर एक तख्ती लिखकर टाँगने की सलाह दी, ताकि सब को पता चल जाये कि मकान खाली है।

रामनाथ बदलू से कागज कलम आदि मँगवाकर उसकी सलाह से कागज पर अंग्रेजी, हिन्दी तथा उर्दू तीनों भाषाओं में लिखने के लिए बैठते हैं। जैसे ही उन्होंने अंग्रेजी में छोटा-छोटा 'टु लेट' लिख कर दिखाया तो शान्ता ने कहा—"भला इतने बारीक हरफ पढ़ कौन सकेगा ?"[3] अब बदलू ने मुन्शी जी से दावात और मोटा कलम लाकर दिया, जिससे रामनाथ ने कागज पर अंग्रेजी में 'टु लेट' तथा हिन्दी में 'मकान खाली है" लिख दिया। इस पर शान्ता तथा बदलू ने विरोध करते हुए कहा कि मकान अन्य कारणों—भूत प्रेत आदि का निवास होने पर भी खाली पड़े रहते हैं, अतः केवल 'मकान खाली है' लिखना उचित नहीं।

---

१ 'कल्या' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १८७।
२ 'कल्या' [कहानी-संग्रह]—पृ० १६०।
३ ,, ,, ,, १८८।

उसे कुख्याति का ग्रास होना पड़ता है। सन्तोषी व्यक्ति के रूप में घनश्याम के चरित्र का चित्रण किया गया है, जो ८८ सौ रुपये की आय में भी सुखी है और उसे अपनी स्थिति के प्रति पूर्ण सन्तोष है। धन के पीछे अन्धा होकर दौड़ने वाला विश्वेश्वरनाथ अपने जीवन का कुचक्र में फँसाकर नष्ट कर डालता है और अन्त में उसे प्रायश्चित करके सन्तोष की श्वास लेनी पड़ती है। कहानी उद्देश्यपूर्ण है, जिसमें कहानीकार का ध्यान सन्तोष के महत्त्व का स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने की ओर रहा है और इसमें उसे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है।

घनश्याम और विश्वेश्वरनाथ दो मित्र हैं। विद्यार्थी-जीवन में घनश्याम निर्धन परिवार का लड़का होने के कारण शिक्षा समाप्त कर नौकरी करके धन कमाने की इच्छा प्रकट करता है। विश्वेश्वरनाथ लक्षाधीश बनने को अपने जीवन का लक्ष्य बनाता है तथा इसी में सुख-शांति समझता है। घनश्याम उचित रूप से भोजन तथा वस्त्र मिलने को ही वास्तविक सुख-शांति समझता है। विश्वेश्वरनाथ उसे कवि कह कर उसकी उपेक्षा करता है।

दस वर्ष पश्चात् विश्वेश्वरनाथ विलायत से बैरिस्टर होकर आया, प्रैक्टिस प्रारम्भ की और चलने लगी। घनश्यामदास बी० ए० के पश्चात् एल० टी० की परीक्षा पास कर पहले अध्यापक और फिर गवर्नमैंट स्कूल में सैकेण्ड मास्टर हो गया। १५० रुपये मासिक आय में वह सुखपूर्वक रहता था, परन्तु विश्वेश्वरनाथ हजार रुपये मासिक आय होने पर भी प्रतिक्षण अधिक धन कमाने की चिन्ता में सलग्न रहता था। उसकी आवश्यकताएँ बढ़ गई थीं, सिगरेट, टी-पार्टी, शराब, मेहमानदारी में सब रुपया व्यय हो जाता था। कभी बढ़िया कार खरीदने की इच्छा होती, कभी कोठी बनवाने की। एक बार इसी प्रकार धन-लिप्सा के चक्कर में उसने अजीतसिंह नामक दीवान का केस ले लिया, जो चार लाख का जाली दस्तावेज बनाकर लाया था। उस पर किसी प्रतिष्ठित गवाह के दस्तखत होने थे। उस व्यक्ति ने बताया कि पुराने गवाहों की मृत्यु हो चुकी। तत्पश्चात् चालीस हजार मेहनताना तथा कोर्ट-फीस पर बैरिस्टर ने गवाह के स्थान पर अपने हस्ताक्षर कर दिये। जिस व्यक्ति पर कोर्ट में नालिश हुई थी वह ताल्लुकेदार था। उसने दस्तावेज तथा हस्ताक्षर दोनों को जाली प्रमाणित कर दिया। विश्वेश्वरनाथ ने उसकी जाँच-पड़ताल ठीक प्रकार से नहीं की थी। अदालत ने मुद्दई का दावा खारिज कर दिया। अजीतसिंह तथा विश्वेश्वरनाथ दोनों पर मुकदमा चला। विश्वेश्वरनाथ को बैरिस्टरों ने यह सोचकर कि रजिस्ट्री होते समय दस्तावेज़ के जाली तथा ठीक होने की जाँच-पड़ताल कर लेंगे यह कहकर बचा लिया कि दीवान जी से बैरिस्टर साहब की

मित्रता थी, इस कारण उन्होंने हस्ताक्षर किये थे। दीवान जी को सजा हो गई। अन्त में छूटने पर विश्वेश्वरनाथ ने घनश्यामदास के समक्ष स्वीकार किया, "इस रुपये रूपी राक्षस ने आँखों पर पट्टी बाँध दी।"[1] और फिर कभी धन के लोभ में न पड़ने की कसम खाई। वह समझ गया कि आराम से रोटी कपड़ा मिल जाय, यही बहुत है। "संसार में यह बात बड़े भाग्यवान हो को नसीब होती है।"[2] अत्यधिक धन की महत्त्वाकांक्षा के दुष्परिणाम ने उसका पथ-निर्देश कर उसे उचित मार्ग पर ला दिया।

उक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य की मूल संवेदना एवं भावना समाज से ग्रहण की गई है। समाज मानव-जीवन की अखण्ड इकाई है। मूलतः मनुष्य का जीवन समाज की दीवारों में बंदी है। ऊर्ध्वतम भूमि पर राजनीति, इतिहास अथवा अन्य सभी वर्ग समाज के अन्तर्गत ही विलीन हो जाते हैं। 'कौशिक' जी अपने युग के समाज से पूर्णतया प्रभावित रहे और उसकी अभिव्यक्ति में इन्हें अपूर्व सफलता प्राप्त हुई। सामाजिक पात्रों के जीवन को कथासूत्र में बाँधते हुए इन्होंने उनकी चारित्रिक विशेषताओं का जो उद्घाटन किया है, वह हिन्दी साहित्य में विशेष महत्त्व रखता है।

---

१ 'पथ-निर्देश' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ ३१।
२ " " " " ३२।

चतुर्थ अध्याय

'कौशिक' जी की कहानियों का रचना-विधान

साहित्य की प्रत्येक विधा के कुछ निश्चित तत्व होते हैं। लेखक की मनोवाछित अभिप्राय तक पहुँचने के लिए की गई कला-सृजन की प्रक्रिया टेक्नीक, शिल्पविधान, रूपविधान[1] या रचना-विधान कहलाती है तथा उसके लिए एकत्र किए गए उपकरण उस कला के मूल तत्व कहलाते हैं। कहानी-कला मानव के बाह्य जीवन और अन्तस्थल मे बनते-बिगडते हुए भाव-समूहो और समस्याओ को क्षणिक विद्युत-प्रकाश की भाँति हमारे समक्ष ला छोडती है और पाठक का मन एव मस्तिष्क उसके भावो से घनीभूत हो उठता है। विभिन्न विद्वानो द्वारा कहानी के निर्माण मे योग देने वाले प्रमुख तत्व हैं (१) शीर्षक, (२) कथावस्तु, (३) पात्र तथा चरित्र-चित्रण, (४) कथोपकथन, (५) वातावरण, (६) उद्देश्य और (७) भाषा-शैली।

'कौशिक' जी की कहानियो के रचना-विधान से अभिप्राय है कि उन्होंने अपनी कहानियो मे उक्त तत्वो का निर्वाह किस प्रकार किया है। अर्थात् शीर्षक का चयन, कथावस्तु का सगठन, पात्रो का चरित्राकन, कथोपकथनो का सयोजन एव वातारण का प्रस्तुतीकरण किस रीति से किया गया है तथा इसके लिए किस प्रकार की भाषा-शैली का आश्रय लिया गया है।

शीर्षक

कहानी का शीर्षक रोचक, आकर्षक तथा कुतूहलवर्धक होना चाहिए ताकि वह पाठक की जिज्ञासा-वृद्धि मे समर्थ हो सके। अग्रेजी समीक्षक चार्ल्स बैरेट के अनुसार अच्छा शीर्षक वही है जो 'विषयानुकूल, निश्चयबोधक, आकर्षक, नवीन एव लघु हो।'[2] शीर्षक-निर्धारण के समय कहानीकार की दृष्टि कहानी के प्रतिपाद्य-

---

१ 'साहित्य साधना के सोपान' - दुर्गाशकर मिश्र, पृ० ६७।

२ "A good title is apt specific, attractive, new and short" – Charles Barret : Short story writing, P P 67.

विषय, मूल समस्या, उद्देश्य अथवा किसी पात्र विशेष पर रहती है, जिसके चारों ओर सम्पूर्ण कथा-चक्र घूमता है। इसलिए लेखक कहानी का शीर्षक उक्त चारों में से किसी एक के आधार पर निश्चित करता है। शीर्षक तथा कहानी का अन्योन्य सम्बन्ध होना चाहिये।[1] शीर्षक से किसी-न-किसी प्रकार कहानी के तथ्य का बोध होना चाहिये तथा शीर्षक के अनुसार कथावस्तु का प्रसार होना चाहिये।

'कौशिक' जी की कहानियों के शीर्षक सक्षिप्त, आकर्षक तथा कथाभाग से सामञ्जस्य रखने वाले हैं। शीर्षक-चयन करते समय कहानीकार की दृष्टि विशेष रूप से कहानी की प्रमुख घटना, पात्र तथा प्रतिपाद्य-विषय आदि पर रही है, जिनके आधार पर इन्होंने अपनी कहानियों के विभिन्न प्रकार के शीर्षक निर्धारित किये हैं।

(क) प्रमुख घटना पर आधारित शीर्षक —'मुन्शी जी का ब्याह', रक्षा-बन्धन', 'रेल यात्रा', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'पूजा का रुपया', 'लाला की होली', 'साध की होली', 'दाँत का दर्द', 'न्याय', दशहरे का मेला', 'ताश का खेल', 'जागरण' तथा 'विधवा की होली' आदि शीर्षक कहानियों की प्रमुख घटनाओं की ओर सकेत करने वाले हैं। उदाहरणस्वरूप 'साध की होली' कहानी में रामसिंह जमींदार सज्जादहुसैन का खून कर अपनी भाभी के अपमान का प्रतिशोध लेता है तथा उसके खून से भाभी के साथ होली खेलने की अपनी साध को पूर्ण करता है। कहानी में यही प्रमुख घटना है, जिसके आधार पर इसका नामकरण किया गया है।

(ख) प्रमुख पात्र के चरित्र को दृष्टि में रखकर निर्धारित किये गये शीर्षक — 'कौशिक' जी ने चरित्र चित्रण प्रधान कहानियों के शीर्षक अधिकाशत प्रमुख पात्रों के आधार पर ही रख दिये हैं, जैसे— पेरिस की नर्तकी', 'नरपशु', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'इक्केवाला', 'कुपात्र', 'प्रेम का पापी', 'पत्रकार', विधवा' तथा 'अपराधी' आदि। कुछ कहानियों के शीर्षक प्रमुख पात्रों के नाम पर ही रख दिये गए हैं, जैसे—*'खिलावन काका'*, *'ननकू चौधरी'*, *'महाराज-पैलेस'*, तथा *'राजा निरजन'* आदि। इस प्रकार के शीर्षक साधारण कोटि के हैं। कुछ कहानियों के शीर्षक

---

१ 'कहानी का रचना विधान'—डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० १४६।

२ "Keep the title in its proper proportion to the nature and interest of the story"—Maconochie, D The craft of the short story. (1936), pp 25.

पारिवारिक सम्बन्धों का निर्देश करने वाले हैं, जैसे—'ताई', 'छोटा बेटा' आदि। 'ताई' कहानी में ताई रामेश्वरी का चरित्र ही प्रमुख है। सम्पूर्ण कहानी का कथानक इसी एक पात्र के इर्द-गिर्द घूमता है। कहानी की मूल समस्या तथा विषय का आधार वही है। अतः एक आदर्श ताई के चरित्र का निर्माण करते हुए 'कौशिक' जी ने इसका शीर्षक निर्धारित किया है।

प्रतिपाद्य-विषय, भाव तथा उद्देश्य से सम्बन्धित शीर्षक :—'कौशिक' जी की अधिकांश कहानियों के शीर्षक उनमें प्रतिपादित विषय, भाव तथा उद्देश्य का निर्देश करने वाले हैं। 'पाँच सौ एक रुपये', 'परीक्षा', 'बात', 'लगन', 'राजपथ', 'लोकापवाद', 'लनतरानी', 'प्रेत', 'वचना', 'पैसा', 'मातृभक्ति', 'प्रमेला', 'विजय', 'भक्त की टेर', 'भगवान की कृतघ्नता', 'बुद्धि-बल', 'बडा दिन', 'बदला', 'परिणाम', 'पथनिर्देश', 'भाग्य-चक्र', 'प्रकृति', 'पुराना सितार', 'भगवान् की इच्छा', 'विश्वास', 'सुधार', 'पाप का बल', 'निर्बल की विजय', 'माल्ती का प्रेम', 'माता का हृदय' तथा 'स्वतन्त्रता' आदि शीर्षक इसी कोटि के अन्तर्गत आते हैं। 'पथ-निर्देश' कहानी में एक महत्त्वाकांक्षी युवक, जिसकी अर्थ-लिप्सा बढ़ते-बढ़ते इस सीमा तक पहुँच जाती है कि वह अनुचित कार्य करने के लिए तैयार हो जाता है, के अनुचित कर्म के दुष्परिणाम तथा प्रायश्चित द्वारा उसका पथ-निर्देश करना लेखक को अभीष्ट है। इसी विषय के आधार पर इसका शीर्षक (पथ-निर्देश) रखा गया है। 'सुधार' कहानी में लेखक का उद्देश्य यह निर्दिष्ट करना रहा है कि बुरे व्यक्तियों का सुधार किस प्रकार करना चाहिये। 'सुधार' शीर्षक इसी उद्देश्य का निर्देश करने वाला है। इसी प्रकार उक्त सभी कहानियों के शीर्षक कहानी के विषय, भाव तथा उद्देश्य को इंगित करने वाले हैं।

उक्त सभी प्रकार के शीर्षक सामान्य कोटि के हैं, विशेष प्रभावोत्पादक नहीं। इनके अतिरिक्त कुछ कहानियों के शीर्षक अत्यन्त आकर्षक, रहस्यपूर्ण, समाज पर व्यंग्य करने वाले तथा मानव-हृदय की भावनाओं से सम्बन्धित हैं, जो पाठकों की जिज्ञासा की वृद्धि करने की दृष्टि से बहुत उपयुक्त हैं। समाज पर व्यंग्य करने वाले शीर्षक है—'गवार', 'धुन', नियति', 'शहर की हवा', 'सयाना कौआ' तथा 'सौंदर्य' आदि। मानव-हृदय की सूक्ष्म भावनाओं का उद्घाटन करने वाले शीर्षक हैं—'मोह', 'भ्रान्ति', 'भ्रम', 'मद', 'शान्ति', 'आत्मोत्सर्ग', 'आत्मग्लानि' तथा 'आर्त' आदि।

'कौशिक' जी ने अनेक कहानियों के शीर्षक विरोधी भावनाओं के आधार पर रख दिये हैं, जो अत्यन्त आकर्षक बन गए हैं, जैसे —'मनुष्यता का दण्ड' तथा

'दरिद्रता का पुरस्कार' आदि । प्रेमचन्द की कहानियों के 'सज्जनता का दण्ड', 'खून सफेद' आदि शीर्षक भी इसी प्रकार विरोधी बातों को प्रकट करने वाले हैं । वस्तुत. शीर्षकों के निर्वाचन में 'कौशिक' जी को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है । इनकी कहानियों के शीर्षक मुख्यत एक-दो-तीन या चार शब्दों तक के हैं तथा विषयवस्तु से पूर्णतया सबद्ध हैं । डॉ० अष्टभुजाप्रसाद पाण्डेय के शब्दों में—'कौशिक जी की कहानियों के शीर्षक अधिकाश समग्र कहानी के कथासूत्र प्रभावान्विति ऐक्य तथा चेतना का स्पर्श करते हैं ।"[१]

कथावस्तु

सुनिश्चित योजना के अनुसार प्रस्तुत किया गया मूल भाव के पूर्व तथा पश्चात् का विवरण कहानी की कथावस्तु या कथानक कहलाता है । इसके अन्तर्गत केवल आरम्भ, चरमोत्कर्ष और अन्त को प्रभावशाली बनाना होता है । कहानी की कथा-वस्तु सक्षिप्त[२] तथा सरल होनी चाहिये । जटिल कथावस्तु से चरित्र दब जाते हैं । रोचकता, सक्षिप्तता, सभाव्यता तथा सरलता आदि इसके प्रमुख गुण होते हैं । 'कौशिक' जी ने कथानक का सगठन बहुत सुन्दर ढग से किया है । इनके कथानक न तो जटिल हैं और न ही अधिक विस्तृत, एक पूर्व-निश्चित योजना के आधार पर धीरे धीरे विकसित होते हैं । इनमे कहानी के विषय का क्रम विन्यास स्पष्ट रूप से निहित रहता है । कुछ विद्वानों के मतानुसार कहानी बिना योजना बनाए भी लिखी जा सकती है[3] । कार्य, कारण और परिणाम सभी को दिखाना वे आवश्यक नही समझते, केवल साध्य की सिद्धावस्था को ही सामने लाकर ऐसा प्रभावोत्पादक दृश्य उपस्थित करना चाहते हैं कि पाठक द्रवित हो उठे । यह विचार युक्तिसगत प्रतीत नही होता । कोई भी निर्माण कार्य पूर्व-योजना के बिना सम्पन्न नही हो सकता ।[४]

---

१ 'हिन्दी कहानी शिल्प इतिहास आलोचना'—पृ० १७८ ।

२ "कहानी की कथावस्तु अत्यन्त सक्षिप्त होती है । उसमें शहर के रहने वाले अल्पमरयक परिवार के घर की भाँति परम्परागत मेहमानों के लिए समाई नहीं ।"—'काव्य के रूप'—गुलाबराय, पृष्ठ १६८ ।

3 ' With or without your kind permission I will kick the word 'plot' right into the sea, hoping that it will sink and never reappear —Francis Vivian 'Creative Technique in Fiction'. (1946), P P 423

४ 'कहानी का रचना विधान' डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा पृष्ठ ४० ।

आरम्भ—कहानी के आदि और अन्त का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध रहता है। लेखक को अन्त में जो कहना होता है उसकी भूमिका वह आरम्भ में ही प्रस्तुत कर देता है। कहानी के आरम्भ-स्थल को सर्वाधिक कौशल के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पाठक रचना की ओर आकृष्ट हो सके। इस भाग का विन्यास कुतूहल और जिज्ञासा का जागृत करने वाला होना चाहिए। प्रसाद ने अपनी कहानियों का आरम्भ इसीलिए नाटकीय ढंग से किया है। "उत्तम कोटि की कहानियों का 'आरम्भ' आकर्षक और अन्त प्रभावपूर्ण होता है।"[1]

'कौशिक' जी ने कहानियों का आरम्भ प्रमुखतः दो प्रकार से किया है। एक इतिवृत्तात्मक ढंग से पात्रों का परिचय देते हुए या किसी पात्र की चरित्रगत विशेषताओं का वर्णन करते हुए दूसरे पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा नाटकीय ढंग से।

(क) इतिवृत्तात्मक आरम्भ —'प्रायश्चित', 'सतोष-धन', 'नरपशु', 'कर्त्तव्य-परायण,' 'विधवा', 'माता की सीख', 'पूजा का रुपया', 'भक्त' तथा 'खिलावन काका' आदि कहानियों का आरम्भ कथात्मक ढंग से हुआ है, जो साधारण कोटि का है, जैसे :—

"बाबू इन्द्रजीतसिंह और मुझमे बड़ी गहरी मित्रता थी। हम दोनों एक ही जाति, एक ही उम्र तथा एक ही विचार के आदमी थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह मेरे घर से थोड़ी ही दूर पर रहते थे। अतएव समय मिलने पर कभी मैं उनके घर चला जाता और कभी वह मेरे घर आ जाते थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह एक हिंदोस्तानी फर्म (व्यवसाय) में हेडक्लर्क अर्थात् बड़े बाबू थे, मासिक वेतन १५० रु० मिलता था।"[2]
—(विधवा)

(ख) प्रमुख पात्र के चरित्र का वर्णन करते हुए आरम्भ —'लीडरी का पेशा' 'सुधार', 'साध की होली' 'ईश्वर का डर', 'दाँत का दर्द', तथा 'पैसा' आदि कहानियों का आरम्भ इसी प्रकार से किया गया है। उदाहरण के लिए 'सुधार' कहानी का आरम्भ देखिये —

"बाबू शिवकुमार बड़े देश-भक्त थे। उनमे देशभक्ति की मात्रा उस सीमा तक पहुँची हुई थी, जिसे कुछ लोग अनधिकार चेष्टा कहते हैं। उनका एक कार्य यह था कि वह प्रायः इस खोज में घूमा करते थे कि उनके भोले-भाले और निस्सहाय

---

१ 'हिंदी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा, पृ० ४८।

२ 'चित्रशाला' [कहानी संग्रह]—पृ० १२८।

भाइयो पर सरकारी कर्मचारी अत्याचार तो नहीं करते। यदि उन्हे कोई ऐसा मामला मिल जाता, तो वह कर्मचारियों को कानूनी शिकजे मे लेकर उन्हे पूरा दण्ड दिलाने की चेष्टा किया करते थे। उन्हे कभी-कभी इस कार्य मे सफलता भी मिलती थी।"[1] (सुधार)

नाटकीय आरम्भ — 'रक्षा बन्धन', 'ताई', मालती का प्रेम', 'वन्ध्या', 'विजय', 'उद्धार', 'आजादी' तथा 'प्रभाव' आदि कहानियो का आरम्भ 'कौशिक' जी ने आकस्मिक रूप से पात्रो के पारस्परिक वार्तालाप के द्वारा किया है, जो बहुत आकर्षक बन पडा है, जैसे निम्न दो उदाहरण देखिये —

(क) "नही, नही यदि तू मुझे सुखी करना चाहता है, तो तुझे ऐसा अवश्य करना पडेगा।"

(चकित होकर) "ऐं, यह तुम क्या कहती हो? क्या तुम्हारा सुख इसी मे है?"[2]—(वन्ध्या)

(ख) "तुम इसे क्या समझते हो—यह बडी मालदार है।"

"ऐं! मालदार है? अजी बस रहने दो। मालदारी तो इसकी सूरत से टपकती है।"

'सूरत पर मत जाओ। किसी की असली हालत का पता उसकी सूरत से नही लग सकता।"[3]—(प्रभाव)

पाठकों की कौतूहल-वृत्ति को जागृत करने में उक्त प्रकार के आरम्भ अत्यधिक सशक्त, समर्थ तथा आकर्षक सिद्ध होते हैं। इस रीति से कहानियों का आरम्भ करने में 'कौशिक' जी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कुछ लेखक कथा के आरम्भ मे कलात्मक चित्र प्रस्तुत कर पाठक को आकर्षित करते हैं। प्रसाद ने 'अपराधी' तथा, 'स्वर्ग के खण्डहर मे' आदि अनेक कहानियों का आरम्भ इसी प्रकार किया है। 'कौशिक' जी ने कुछ कहानियों में किसी पात्र की एक उक्ति देते हुए सासारिक परिस्थिति आदि के चित्रण से भी कहानियों का आरम्भ किया है, *यथा* —

'बेटी सुशीला, अब रहने दो। बारह तो बज गए, सवेरे देखा जायगा। आज दिनभर और इतनी रात काम करते हो बीती।"

---

१ 'पथ निर्देश' [कहानी-संग्रह]—पृष्ठ ५४।
२ 'वन्ध्या' ,, पृष्ठ ५५।
३ 'प्रतिफल' ,, पृष्ठ १४४।

आरम्भ—कहानी के आदि और अन्त का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध रहता है। लेखक को अन्त मे जो कहना होता है उसकी भूमिका वह आरम्भ मे ही प्रस्तुत कर देता है। कहानी के आरम्भ स्थल को सर्वाधिक कौशल के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पाठक रचना की ओर आकृष्ट हो सके। इस भाग का विकास कुतूहल और जिज्ञासा को जागृत करने वाला होना चाहिए। प्रसाद ने अपनी कहानियो का आरम्भ इसीलिए नाटकीय ढग से किया है। "उत्तम कोटि की कहानियो का 'आरम्भ' आकर्षक और अन्त प्रभावपूर्ण होता है।"[1]

'कौशिक' जी ने कहानियो का आरम्भ प्रमुखत दो प्रकार से किया है। एक इतिवृत्तात्मक ढग से पात्रो का परिचय देते हुए या किसी पात्र की चरित्रगत विशेषताओ का वर्णन करते हुए, दूसरे पात्रो के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा नाटकीय ढग से।

(क) इतिवृत्तात्मक आरम्भ — प्रायश्चित', 'सतोष धन', 'नरपशु', कर्तव्य-परायण,' 'विधवा', 'माता की सीख', 'पूजा का रुपया', 'भक्त' तथा 'खिलावन काका' आदि कहानियो का आरम्भ कथात्मक ढग से हुआ है, जो साधारण कोटि का है, जैसे —

"बाबू इन्द्रजीतसिंह और मुझमे बडी गहरी मित्रता थी। हम दोनो एक ही जाति, एक ही उम्र तथा एक ही विचार के आदमी थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह मेरे घर से थोडी ही दूर पर रहते थे। अतएव समय मिलने पर कभी मैं उनके घर चला जाता और कभी वह मेरे घर आ जाते थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह एक हिंदोस्तानी फर्म (व्यवसाय) मे हेडक्लर्क अर्थात बडे बाबू थे, मासिक वेतन १५० रु० मिलता था।"[2] —(विधवा)

(ख) प्रमुख पात्र के चरित्र का वर्णन करते हुए आरम्भ —'लीडरी का पेशा' सुधार', 'साथ की होली' 'ईश्वर का डर', 'दाँत का दर्द', तथा 'पैसा' आदि कहानियो का आरम्भ इसी प्रकार से किया गया है। उदाहरण के लिए 'सुधार' कहानी का आरम्भ देखिये —

"बाबू शिवकुमार बडे देश-भक्त थे। उनमे देशभक्ति की मात्रा उस सीमा तक पहुँची हुई थी, जिसे कुछ लोग अनधिकार चेष्टा कहते हैं। उनका एक कार्य यह था कि वह प्राय इस खोज मे घूमा करते थे कि उनके भोले-भाले और निस्सहाय

---

१ 'हिंदी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—डा० ब्रह्मदत्त शर्मा, पृ० ४८।
२ 'चित्रशाला' [कहानी संग्रह]—पृ० १२८।

भाइयों पर सरकारी कर्मचारी अत्याचार तो नहीं करते। यदि उन्हें कोई ऐसा मामला मिल जाता, तो वह कर्मचारियों को कानूनी शिकजे में लेकर उन्हें पूरा दण्ड दिलाने की चेष्टा किया करते थे। उन्हें कभी-कभी इस कार्य में सफलता भी मिलती थी।"[१] (सुधार)

नाटकीय आरम्भ:— 'रक्षा बन्धन', 'ताई', मालती का प्रेम', 'वन्ध्या', 'विजय', 'उद्धार', 'आजादी' तथा 'प्रभाव' आदि कहानियों का आरम्भ 'कौशिक' जी ने आकस्मिक रूप से पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप के द्वारा किया है, जो बहुत आकर्षक बन पड़ा है, जैसे निम्न दो उदाहरण देखिये —

(क) "नहीं, नहीं यदि तू मुझे सुखी करना चाहता है, तो तुझे ऐसा अवश्य करना पड़ेगा।"

(चकित होकर) "एँ, यह तुम क्या कहती हो? क्या तुम्हारा सुख इसी में है?"[२]—(वन्ध्या)

(ख) "तुम इसे क्या समझते हो—यह बड़ा मालदार है।"

"एँ! मालदार है? अजी बस रहने दो। मालदारी तो इसकी सूरत से टपकती है।"

"सूरत पर मत जाओ। किसी की असली हालत का पता उसकी सूरत से नहीं लग सकता।"[३]—(प्रभाव)

पाठकों की कौतूहल-वृत्ति को जागृत करने में उक्त प्रकार के आरम्भ अत्यधिक सशक्त, समर्थ तथा आकर्षक सिद्ध होते हैं। इस रीति से कहानियों का आरम्भ करने में 'कौशिक' जी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कुछ लेखक कथा के आरम्भ में कलात्मक चित्र प्रस्तुत कर पाठक को आकर्षित करते हैं। प्रसाद ने 'अपराधी' तथा, 'स्वर्ग के खण्डहर में' आदि अनेक कहानियों का आरम्भ इसी प्रकार किया है। 'कौशिक' जी ने कुछ कहानियों में किसी पात्र की एक उक्ति देते हुए सासारिक परिस्थिति आदि के चित्रण से भी कहानियों का आरम्भ किया है, यथा —

"बेटी सुशीला, अब रहने दो। बारह तो बज गए, सवेरे देखा जायगा। आज दिनभर और इतनी रात काम करते ही बीती।"

---

१ 'पथ-निर्देश' [कहानी-संग्रह]—पृष्ठ ५४।
२ 'वन्ध्या' ,, पृष्ठ ४५।
३ 'पवित्र फूल' ,, पृष्ठ १४४।

आरम्भ—कहानी के आदि और अन्त का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध रहता है। लेखक का अन्त में जो कहना होता है उसकी भूमिका वह आरम्भ में ही प्रस्तुत कर देता है। कहानी के आरम्भ-स्थल को सर्वाधिक कौशल के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पाठक रचना की ओर आकृष्ट हो सके। इस भाग का विकास कुतूहल और जिज्ञासा को जागृत करने वाला होना चाहिए। प्रसाद ने अपनी कहानियों का आरम्भ इसीलिए नाटकीय ढंग से किया है। "उत्तम कोटि की कहानियों का 'आरम्भ' आकर्षक और अन्त प्रभावपूर्ण होता है।"[1]

'कौशिक' जी ने कहानियों का आरम्भ प्रमुखतः दो प्रकार से किया है। एक इतिवृत्तात्मक ढंग से पात्रों का परिचय देते हुए या किसी पात्र की चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन करते हुए दूसरे पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा नाटकीय ढंग से।

(क) इतिवृत्तात्मक आरम्भ — प्रायश्चित, 'सन्तोष धन', 'नरपशु', 'कर्त्तव्य-परायण,' 'विधवा', 'माता की सीख', 'पूजा का रुपया', 'भक्त' तथा 'तिलावन यात्रा' आदि कहानियों का आरम्भ कथात्मक ढंग से हुआ है, जो साधारण कोटि का है, जैसे —

"बाबू इन्द्रजीतसिंह और मुझमें बड़ी गहरी मित्रता थी। हम दोनों एक ही जाति, एक ही उम्र तथा एक ही विचार के आदमी थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह मेरे घर से थोड़ी ही दूर पर रहते थे। अतएव समय मिलने पर कभी मैं उनके घर चला जाता और कभी वह मेरे घर आ जाते थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह एक हिंदोस्तानी फर्म (व्यवसाय) में हेडक्लर्क अर्थात बड़े बाबू थे, मासिक वेतन १८० रु० मिलता था।"[2] —(विधवा)

(ख) प्रमुख पात्र के चरित्र का वर्णन करते हुए आरम्भ —'लीडरी का पेशा' सुधार', 'साध की होली' 'ईश्वर का डर', 'दाँत का दर्द', तथा 'पैसा' आदि कहानियों का आरम्भ इसी प्रकार से किया गया है। उदाहरण के लिए 'सुधार' कहानी का आरम्भ देखिये —

'बाबू शिवकुमार बड़े देश भक्त थे। उनमे देशभक्ति की मात्रा उस सीमा तक पहुँची हुई थी, जिसे कुछ लोग अनधिकार चेष्टा कहते हैं। उनका एक कार्य यह था कि वह प्रायः इस खोज में घूमा करते थे कि उनके भोले-भाले और निस्सहाय

---

१ 'हिंदी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—डा० ब्रह्मदत्त शर्मा, पृ० ४८।
२ 'चित्रशाला' [कहानी संग्रह]—पृ० १२८।

भाइयों पर सरकारी कर्मचारी अत्याचार तो नहीं करते। यदि उन्हे कोई ऐसा मामला मिल जाता, तो वह कर्मचारियों को कानूनी शिकजे मे लेकर उन्हे पूरा दण्ड दिलाने की चेष्टा किया करते थे। उन्हे कभी-कभी इस कार्य मे सफलता भी मिलती थी।"[1] (सुधार)

नाटकीय आरम्भ— 'रक्षा बन्धन', 'ताई', मालती का प्रेम', 'वन्ध्या', 'विजय', 'उद्धार', 'आजादी' तथा 'प्रभाव' आदि कहानियों का आरम्भ 'कौशिक' जी ने आकस्मिक रूप से पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप के द्वारा किया है, जो बहुत आकर्षक बन पड़ा है, जैसे निम्न दो उदाहरण देखिये।—

(क) "नहीं, नहीं यदि तू मुझे सुखी करना चाहता है, तो तुझे ऐसा अवश्य करना पड़ेगा।"

(चकित होकर) "ऐं, यह तुम क्या कहती हो? क्या तुम्हारा सुख इसी मे है?"[2]—(वन्ध्या)

(ख) "तुम इसे क्या समझते हो—यह बड़ी मालदार है।"

"ऐं! मालदार है? अजी बस रहने दो। मालदारी तो इसकी सूरत से टपकती है।"

'सूरत पर मत जाओ। किसी की असली हालत का पता उसकी सूरत से नहीं लग सकता।"[3]—(प्रभाव)

पाठकों की कौतूहल-वृत्ति को जागृत करने मे उक्त प्रकार के आरम्भ अत्यधिक सशक्त, समर्थ तथा आकर्षक सिद्ध होते हैं। इस रीति से कहानियों का आरम्भ करने मे 'कौशिक' जी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कुछ लेखक कथा के आरम्भ में कलात्मक चित्र प्रस्तुत कर पाठक को आकर्षित करते हैं। प्रसाद ने 'अपराधी' तथा, 'स्वर्ग के खण्डहर मे' आदि अनेक कहानियो का आरम्भ इसी प्रकार किया है। 'कौशिक' जी ने कुछ कहानियो मे किसी पात्र की एक उक्ति देते हुए सासारिक परिस्थिति आदि के चित्रण से भी कहानियों का आरम्भ किया है, यथा.—

"बेटी सुशीला, अब रहने दो। बारह तो बज गए, सवेरे देखा जायगा। आज दिनभर और इतनी रात काम करते ही बीती।"

---

१ 'पथ निर्देश' [कहानी-संग्रह]—पृष्ठ ५४।
२ 'वन्ध्या' ,, पृष्ठ ५५।
३ 'पग्निल पुष्प' ,, पृष्ठ १४४।

रात के बारह बज चुके हैं। संसार का अधिकांश भाग निद्रा की गोद में खर्राटे ले रहा है। जाग केवल वे लोग रहे हैं, जिन्हें जागने में सोने की अपेक्षा विशेष आनंद और सुख मिलता है, अथवा वे लोग, जो दिन को रात तथा रात को दिन समझते हैं और या फिर वे लोग, जो रात के अंधकार और लोगों की निद्रावस्था से अनुचित लाभ उठाने को उत्सुक रहते हैं। परंतु इनके अतिरिक्त कुछ और प्रकार के लोग भी जाग रहे हैं। 'जिनके उदर-पोषण के लिए दिन के बारह घंटे यथेष्ट नहीं, जिनके लिये सोने और आराम करने का अर्थ दूसरे दिन फाका करना है, जो निद्रा-देवी के प्रेमालिंगन का तिरस्कार केवल इसलिये कर रहे हैं कि उसके बदले में दूसरे दिन उन्हें क्षुधा-राक्षसी की मार सहनी पड़ेगी।"[1]—(उद्धार)

मध्यभाग और चरमसीमा—कहानी का मध्यभाग उसके आदि और अंत को संतुलन प्रदान करता है। आरम्भ से चलकर कहानी का मूल विषय—चरित्र, घटना अथवा भाव एक क्रम से एकनिष्ठ होकर आगे बढ़ता है, उसकी गति की तीव्रता के साथ-साथ प्रभाव भी सिमिट कर घनीभूत हो जाता है। "इस विस्तार-क्रम में जिस समय कथानक तीव्रतम गति से पर्यवसान की ओर मोड़ लेता है, उसी को कहानी का मध्यबिंदु समझना चाहिए।"[2] कहानी के मध्यबिंदु या चरमोत्कर्ष स्थल पर पहुँचकर पाठक का मन जिज्ञासा, कुतूहल और ऊहापोह के धरातल पर उतर आता है तथा उसकी कल्पना अनुमान के बल पर विविध दिशाओं में उड़ानें भरने लगती है। इसी स्थल पर लेखक कथा के मूल भाव का संकेत प्रस्तुत करता है।

'कौशिक' जी की कहानियों में मध्यभाग का विकास बहुत सुन्दर ढंग से हुआ है तथा चरमोत्कर्ष-स्थल का सौंदर्य अद्वितीय है। निरन्तर विकसित होती हुई कथा में किसी आकस्मिक घटना या दुर्घटना के द्वारा एक प्रकार का मोड़ आ जाता है। जिससे किसी पात्र के चरित्र में आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित हो जाता है, कौशिक' जी ने इसी रीति से अपनी अधिकांश कहानियों में चरमबिंदु की स्थापना की है। उदा-हरणस्वरूप 'ताई' कहानी में चरमोत्कर्ष उस स्थल पर आता है, जहाँ मनोहर ताई से पतंग मँगवाने की याचना करता है तथा ताई के मौन रह जाने पर कह उठता है, "तुम हमें पतंग नहीं मँगवा दोगी तो, ताऊजी से कहकर तुम्हें पिटवावेंगे।"[3] ताई

---

१. 'चित्रशाला' [क० सं०]—पृ० २३।
२. 'कहानी का रचना-विधान'—डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पृ० ७७।
३. 'चित्रशाला' [क०-सं०]—पृ० ५३।

के हृदय मे विद्वेष और क्रोध की ज्वाला धधक उठती है, ममत्व तथा प्रेम की भावनाएँ अन्तस्थल मे दब जाती है और ईर्ष्या की भावना पूर्ण रूप से प्रज्जवलित हो उठती है। मनोहर के कटी हुई पतग के लिए दौडने तथा छज्जे से गिरते समय रक्षा के लिए पुकारने पर भी ताई जाने मे विलम्ब कर देती है। मनोहर गिर जाता है और ताई भी अचेत हो जाती है। यहाँ कथा मोड लेती है और ताई के हृदय मे बच्चो के प्रति विद्वेष की भावना नष्ट होकर प्रेम तथा ममत्व की भावना स्थापित हो जाती है। उसका चरित्र एक आदर्श चरित्र के रूप मे प्रतिष्ठित हो जाता है।

अन्त—

कहानी का अन्त सम्पूर्ण कहानी के सौदर्य को समेटकर अपने अन्तर मे छिपाए रहता है जिसे पढकर पाठक सम्पूर्ण कहानी की गतिविधि को समझ सकता है। कहानी के इस अश में कथा, भाव और चरित्र पूर्णता को प्राप्त होते हैं तथा लेखक की योजना का अन्तिम रहस्य इसी स्थल पर आकर खुलता है। अत कहानी का अन्त 'लघुप्रसारगामी' और सरल होना चाहिए, यदि नाटकीय ढग से कथा का अन्त हो तो सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। प्रसाद की 'नीरा' कहानी का अन्त इसी प्रकार हुआ है।

'कौशिक' जी ने अधिकाश कहानियो का अन्त इतिवृत्तात्मक ढग से किया है। कथानक को चरमसीमा तक पहुँचाकर कहानीकार ने अन्त म उपदेशात्मक वाक्य तथा परिस्थिति आदि का वर्णन कर दिया जिसमे कहानियो की प्रभावोत्पादकता कम हो गई है। परन्तु ऐसा सभी कहानियो मे नही हुआ है। कुछ कहानियो—'जाल' 'अहिंसा', 'जीत मे हार', 'साध की होली', 'एप्रिल फूल', 'मनुष्यता का दण्ड', 'स्वाभिमानी नमकहलाल', 'माल्ती का प्रेम', 'जलन', 'लोकापवाद', 'होली', 'यौवन की आँधी' तथा 'पूजा का रुपया' आदि का अन्त 'कौशिक' जी ने नाटकीय ढग से किया है, जो निश्चय ही बहुत रोचक, आकर्षक, सुन्दर तथा प्रभावपूर्ण बन पडा है। उदाहरण के लिए 'साध की होली' शीर्षक कहानी का अन्त देखिये —

"भौजी ने एक बार आँख खोलकर कहा—देवर, जाओ, यह मेरी इस जन्म की अन्तिम होली है।

रामसिंह—तो क्या अब होली नही खेलोगी, भौजी ?

भौजी—खेलूँगी।

रामसिंह—किससे ?

भौजी—तुमसे।

रामसिंह—मुझसे ?

भौजी—हाँ, तुमसे।

रामसिंह—कहाँ ?

भौजी—स्वर्ग में।

रामसिंह—तब मैं वहाँ शीघ्र पहुँचता हूँ, भौजी !

भौजी—जाओ देवर तुमसे पहले मैं पहुँचूँगी।"[१]

उक्त रीति से कहानी का अन्त करते हुए कहानीकार ने कहानी के अन्तिम रहस्य—खून के बदले रामसिंह को फाँसी की सजा तथा देवर के वियोग में भौजी का शीघ्र ही स्वर्गवास होने की संभावना—को वर्णन द्वारा उद्घाटित न करके संकेत रूप में पाठकों के समझने के लिए छोड़ दिया है। इस प्रकार का अन्त अपने प्रभाव से पाठक के चित्त को क्षण-भर के लिए झकझोर देता है।

कुछ कहानियों में 'कौशिक' जी ने अंत में शीर्षक से सम्बन्धित वाक्य रख दिये हैं, जो शीर्षक को अधिक सशक्त तथा स्पष्ट कर देते हैं। 'ईश्वर का डर', 'सच्चा कवि', कर्त्तव्य पालन', 'भ्रम', समय की बात', 'भोला शिकार', 'प्रेम का पापी', 'पत्रकार', 'एप्रिल फूल' तथा 'लीडरी का पेशा' आदि कहानियों का अंत इसी रीति से हुआ है, जैसे—

(क) "उसकी उस सच्चाई का कारण केवल ईश्वर का डर था।"[२]

(ख) "मेरे हृदय में यह भ्रम घुसा हुआ था कि स्थूल सुन्दरता ही मनुष्य का हृदय खींच सकती है।"[३]

(ग) 'अरे ! मैं इसे भोला शिकार समझता था।"[४]

(घ) 'प्रेम का पापी" शरीर बंधन से मुक्त होकर परम-धाम को सिधार गया।"[५]

(ङ) 'मैं हूँ एक पत्रकार ! और पत्रकार को बहुधा हृदयहीन बनना ही पड़ता है।"[६]

---

१ 'साध की होली' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १२।
२ ,, ,, ,, ,, १४२।
३ 'कल्या' ,, ,, ,, ६१।
४ 'जात में हार' ,, ,, ,, २०१।
५. 'पथ निदश' ,, ,, ,, ६२।
६ 'रक्षा बंधन' ,, ,, ,, १६।

वस्तुत कथाविन्यास के क्षेत्र मे 'कौशिक' जी को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है। इनके कथानक विभिन्न घटनाओं मे घूमते हुए मूल केन्द्र-बिन्दु तक पहुँच जाते हैं। कथानको मे दैवी घटनाओ तथा सयोगो के प्रयोग ने कही-कही अस्वाभाविकता ला दी है। साधारणतया कथानक मन्द गति से चलते हैं, जो कि स्वाभाविक, रमणीय तथा सरल है। श्री राजनाथ शर्मा के शब्दो मे—"उसमे न मनोविज्ञान की उलझनें और पेचीदगियाँ रहती हैं और न नवीन शिल्प का कोई मोह हो। सारा कथानक एक पूर्व निश्चित बधी-बधाई लीक पर सहज गति से चलता जाता है। उसमे अपना एक विशेष चमत्कार रहता है।"[1] कहानी के अत मे कहीं-कही इस प्रकार के वाक्य—"यह सन्यासी कौन था ? वही हमारा पूर्व-परिचित अयोध्या प्रसाद !"[2] देने से ऐसा प्रतीत होता है मानो कहानीकार प्रत्येक तथ्य को स्वय ही स्पष्ट करके पाठक के समझने के लिए कुछ भी नही छोडना चाहता। इस प्रकार के परिचयात्मक तथा अन्य उपदेशात्मक वर्णनो के कारण 'कौशिक' जी की कुछ कहानियो का अन्त साधारण ढग से हुआ है, जो आकर्षक तथा प्रभावपूर्ण नही है, परन्तु सर्वांश रूप में इनकी कथावस्तु मे प्रस्तावना, मुख्यांश, चरमसीमा तथा पृष्ठ भाग का सौन्दर्य सर्वत्र विद्यमान रहता है।

पात्र तथा चरित्र चित्रण

कहानी मे सम्पूर्ण जीवन की व्याख्या न होकर जीवन के किसी एक अश पर प्रकाश डाला जाता है तथा इसके लिए कम से कम पात्रों को स्थान देना उचित होता है। 'कौशिक' जी ने पात्रो के चयन मे अत्यधिक कुशलता से काम लिया है। इनकी अधिकाश कहानियों मे दो-तीन अथवा चार पात्रो को ही स्थान दिया गया है। कुछ कहानियो मे इससे अधिक पात्र भी आ गए हैं, परन्तु व्यर्थ कथा से असम्बद्ध पात्रो को 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियो के अन्तर्गत नहीं रखा है।

मानव जीवन के कुशल चित्रकार को सवेदनशीलता के साथ पात्र के जीवन से तादात्म्य स्थापित करना होता है। वह पात्र की गतिविधियो तथा भाव-भगिमाओ का अनुभूतिमूलक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसके रहस्यमय जीवन मे प्रवेश कर, उसके विचारो और भावनाओ का निरीक्षण करके अपनी कल्पना-शक्ति के द्वारा चरित्र

---

१. 'हिन्दी कहानियाँ' [आलोचनात्मक अध्ययन]—पृ० १८७।
२. 'चित्रशाला' [प्र०-भा०]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक'—पृ० १५७।

निर्धारित करता है। ये पात्र या तो कहानीकार अपने चतुर्दिक रहने वाले सम्बन्धियों परिचित व्यक्तियों तथा मित्रों में से खोजता है अथवा इतिहास और साहित्यक ग्रन्थों में वर्णित पात्रों को अपनी रचना का आधार बनाता है। चरित्र-चित्रण द्वारा कहानीकार मानव-जीवन का जो अध्ययन प्रस्तुत करता है वह उसकी अपनी तर्कबुद्धि, विवेचनशीलता, कल्पना, अध्ययनशीलता, व्यावहारिक ज्ञान तथा संवेदनशीलता पर आधारित रहता है। यथार्थ पात्रों को अपनी कल्पना के रंग में रंगकर कहानीकार उनमें अपनी प्रतिभा का आरोप करता है। फलस्वरूप वे चरित्र पाठक के समक्ष अपने वास्तविक रूप में न आकर लेखक के मनोवांछित रूप में प्रस्तुत होते हैं।

कहानी में संक्षिप्तता के कारण चरित्र विकास के लिए कम सुविधा होती है, इसलिए कुशल कहानीकार संकेत-मात्र से पात्र के विशिष्ट गुण-अवगुणों को चित्रित करता है, पात्र के चरित्र के किसी एक चमत्कार बिंदु की ओर अग्रसर होता हुआ ऐसे स्थल पर लेजाकर मोड़ देता है जिससे उसका सम्पूर्ण चरित्र मुखरित हो उठता है। चरित्र-चित्रण की आधुनिकतम प्रवृत्ति मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित है। उसमें अन्तर्जगत के विचारों तथा भावों का संघर्ष दिखाई देता है। आधुनिक लेखक भौतिक तत्वों के चित्रण की अपेक्षा मानव प्रवृत्तियों की समीक्षा करना अधिक पसन्द करता है।

'कौशिक' जी का मानव जीवन का अध्ययन बहुत गंभीर था। इन्होंने यथार्थ जीवन से पात्र लेकर उनका चरित्र अपने आदर्श के अनुकूल कहानियों में अंकित किया। चरित्र-चित्रण की कला के विषय में उन्होंने एक स्थान पर लिखा है—"नित्य जो चरित्र देखने को मिलते हैं, उन चरित्रों से भिन्न कोई ऐसा अनोखा चरित्र उपस्थित करना, जिसे देखकर विज्ञ पाठक फड़क उठें—उनके हृदय में यह बात पैदा हो कि मनुष्य-चरित्र के सम्बन्ध में उन्हें कोई नई बात मालूम हुई, यही चरित्र-चित्रण की कला है।"[१] इसी दृष्टिकोण के आधार पर 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियों में पात्रों का चरित्र-चित्रण किया है।

गुलाबराय ने चरित्र चित्रण के दो मुख्य प्रकार स्वीकार किये हैं[२]—(क) प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक, (ख) परोक्ष या नाटकीय। प्रथम में लेखक स्वयं पात्र के चरित्र पर प्रकाश डालता है, दूसरे में चरित्र-पात्रों के वार्तालाप अथवा कार्य-व्यापार

---

१. उद्धृत 'हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास'—डॉ० सुरेश सिनहा, पृ० १७५।
२. 'काव्य के रूप'—पृ० २००।

से अनुमेय रहता है। इसमें लेखक किसी पात्र द्वारा सीधे या संकेतात्मक रूप से टीका टिप्पणी भी करा देता है। सांकेतिक चित्रण में गुणों की अपेक्षा उनके द्योतन करने वाले कार्यों का अधिक वर्णन रहता है। प्रत्यक्ष-चित्रण में भी प्राय सांकेतिक ढंग ही अधिक पसन्द किया जाता है। 'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में चरित्र-चित्रण के लिए अनेक रीतियों का प्रयोग किया है—

सांकेतिक रूप से प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक चरित्र चित्रण —

(क) "राजा निरंजन बहुत ही नेक आदमी हैं, कसर केवल इतनी ही है कि नेक होते हुए भी थोड़े से बेवकूफ हैं, हालाँकि अपने मतलब के बड़े पक्के हैं। दूसरों को चरखा बताने और उल्लू बनाने में राजा निरंजन को कमाल हासिल है ऐसे-वैसे को चुटकियों में उड़ा देते हैं लेकिन फिर भी कुछ लोग इन्हें किसी कदर बेवकूफ समझते हैं—यह राजा निरंजन का दुर्भाग्य ही समझना चाहिए।"[१] (राजा निरंजन)

(ख) "शुक्ल जी कभी स्पष्ट उत्तर न देते थे। सदैव दुटप्पी बात कहते थे। शुक्ल जी में यह एक गुण भी था कि जैसी अधिकांश जनता की रुचि देखते थे, वैसी ही हाँकते थे। जब देखते थे कि जनता की रुचि इस समय देश के प्रमुख बड़े नेता गालियाँ देने की ओर अधिक है, तब आप गालियों की ऐसी फुलझड़ियाँ छोड़ते कि सुनने वाले प्रसन्नता के मारे फूल उठते, और जब देखते कि जनता इस समय उनकी प्रशंसा सुनने में प्रसन्न होती है, तब तारीफों के पुल बाँध देते थे।"[२] (लीडरी का पेशा)

परोक्ष चित्रण—'कौशिक' जी ने अनेक स्थलों पर पात्रों का चरित्र-चित्रण उनके पारस्परिक वार्तालाप द्वारा स्पष्ट किया है। कहीं उनके पात्र स्वय अपने गुण-दोषों का वर्णन करते हैं, कहीं एक दूसरे के गुण-दोषों पर प्रकाश डालते हैं तथा कहीं किसी अन्य व्यक्ति के चरित्र पर टीका-टिप्पणी करते हुए दिखाई पड़ते हैं—

(क) "चमेली, मैं बड़ा अधम हूँ, बड़ा नीच हूँ। इसमें सदेह नहीं कि एक घंटा पहले तक मैं कपट वेष धारण किए हुए था; परन्तु ईश्वर साक्षी है, इस समय मैं अपने पिछले शुष्क व्यवहार पर अत्यन्त लज्जित हूँ। मैंने जो कुछ किया, उसका प्रायश्चित यदि ये प्राण देकर भी हो सके, तो मैं करने को तैयार हूँ। मैं अंधा हो गया था। मैं नहीं जानता, मुझे क्या हो गया था। मुझे इस बात का आश्चर्य है कि मैंने कैसे तुमसे यह दुर्व्यवहार किया।"[३] (वह प्रतिमा)

---

१. 'पश्चिम पुत्र' [कहानी संग्रह] —विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ८३।
२ 'चित्रशाला' ,, ,, पृ० ६१।
३. ,, ,, ,, पृ० १२६।

(ख)"—स्नेहलता हँसने के पश्चात् बोली—"तुम इतने कोमल हो प्रबुद्ध कि तुम किसी को हानि पहुँचा सकते हो, इसमें मुझे संदेह है।"

"मैं कोमल हूँ ?" प्रबुद्ध ने प्रसन्न मुख होकर पूछा।

"हाँ ! कम से कम शरीर में तो कोमल होई ! हृदय की मुझे खबर नहीं।"[1] (विजय)

(ग) "वह बड़ा बदमाश आदमी है। गांव भर उससे डरता है। उसके डर के मारे कोई स्त्री अकेली बाहर नहीं जाती। खैर जो हुआ सो हुआ, अब अकेली मत जाना।"[2] (माघ की होली)

कहानी में गढ़े-गढ़ाये चरित्रों पर प्रकाश डाला जाता है, विकास की गुंजाइश कम रहती है। 'कौशिक' जी ने अपनी अनेक कहानियों—'ताई', 'विजय', 'शखनाद', 'माली का प्रेम', सशोधन, तथा 'वीर श्रेष्ठ' आदि में किसी दुर्घटना का सयोजन कर पात्रों के चरित्र में आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित कर आदर्श चरित्रों की स्थापना की है।

'कौशिक' जी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की विधि से चरित्र-चित्रण उस रूप में प्राप्त नहीं होता जैसा प्रसाद, प्रेमचन्द तथा अज्ञेय आदि की कहानियों में उपलब्ध है। पात्रों के मनोभावों, अन्तर्द्वन्द्व तथा आन्तरिक विशेषताओं को 'कौशिक' जी ने विशेष रूप से वर्णन द्वारा प्रस्तुत किया है। व्यजित रूप में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का इनके युग में अभाव था। इनकी कहानियों में मानव-जीवन की प्रवृत्तियों तथा सघर्षों का सुन्दर उल्लेख हुआ है।

कथोपकथन

कथोपकथन द्वारा कहानी के सुन्दरतम स्थलों को तर्क-वितर्क और प्रतिपादन द्वारा चमत्कारपूर्ण बनाया जाता है। पात्रों के चितन, साहस और बौद्धिक विकास का ज्ञान कराने में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। पात्रों के मनोभाव कथोपकथनों की लड़ियों में गुंथकर सक्षेप में उतना कह जाते हैं जितना स्पष्ट करने के लिए इतिवृत्तात्मक वर्णन में पृष्ठ के पृष्ठ काले करने पर भी न कहा जा सके। कथोपकथन नाट्य-रचना के मूल साधन हैं परन्तु साधारणत इनका प्रयोग कहानी

---

१. 'कल्पा' [कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १७८।
२. 'माघ की होली' ,, ,, पृ० ५।

और उत्साह में भी कम नहीं होता। इन के सौंदर्य से कहानी में गतिशीलता आती है। भावात्मक चित्रणों के स्थलों को उभारने में भी जिन सूक्ष्म भावों का विवेचन कथोपकथनों द्वारा किया जाता है, उनमें इतिवृत्तात्मक वर्णन की अपेक्षा अधिक सजीवता होती है। कहानी में संवादों का 'लघु-प्रसारी, वैदग्ध्यपूर्ण, आकर्षक और सारगर्भित प्रयोग ही इष्ट होता है।'[1]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में संक्षिप्त, आकर्षक तथा सारगर्भित संवादों या कथोपकथनों का ही अधिक प्रयोग किया है। यद्यपि कहीं-कहीं लम्बे कथोपकथन भी आ गए हैं जहाँ कहानीकार की भावुक प्रवृत्ति प्रबल हो उठी है, परन्तु अधिकांशतः इनके संवाद छोटे तथा परिस्थिति के अनुकूल हैं, निरर्थक नहीं। इनके द्वारा 'कौशिक' जी ने कहीं पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डाला है, कहीं घटनाओं को गतिशील बनाया है तो कहीं तर्क-वितर्कमयी उक्तियों द्वारा सिद्धान्त-प्रतिपादन के लिए भी इनका प्रयोग किया है। इनके कथोपकथनों का प्रयोग देखिये, कितने सजग प्रभाव पूर्ण एवं उपयुक्त हैं :—

"माता—मैं सब सोच चुकी हूँ। तुझे मेरा कहना करना ही पड़ेगा।

रामे०—माँ! तुम अपने मातृत्व और मेरे पुत्रत्व से अनुचित लाभ उठाना चाहती हो।

माता—मेरी आज्ञा ही न्याय है। तुझे मेरा कहना करना ही पड़ेगा।

रामे०—(क्रुद्ध होकर) तो मैं भी कहता हूँ कि मैं नहीं करूँगा।"[2] (बन्ध्या)

ये संवाद माता तथा पुत्र के दृढ़ चरित्र की ओर संकेत करते हैं। डॉ० भागीरथ मिश्र के शब्दों में—'कौशिक जी अपनी कहानियों में कथोपकथन को सबसे अधिक महत्त्व देते हैं। इनका विचार है कि हमारा जीवन बातचीत में ही बीतता है अतः स्वाभाविकता लाने के लिए कथोपकथन के द्वारा ही अधिकांश कथानक और चरित्र का उद्घाटन करना चाहिए।"[3] सरलता, स्वाभाविकता तथा अभिनयात्मकता इनके संवादों की विशेषताएँ हैं और नाटकीय तत्त्वों का इनमें पूर्ण समावेश हुआ है। कहीं-कहीं कथोपकथनों के बीच में 'कौशिक' जी ने इस प्रकार के वाक्य—"पाठक समझ

---

1. 'कहानी का रचना-विधान'—डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० १२३।
2. 'बन्ध्या' (कल्प मन्दिर)—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ५६।
3. 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास'—रामबहोरी शुक्ल और डॉ० भगीरथ मिश्र, पृ० २६६।

(ख)"—स्नेहलता हँसने के पश्चात् बोली—"तुम इतने कोमल हो प्रबुद्ध कि तुम किसी को हानि पहुँचा सकते हो, इसमें मुझे संदेह है।"

"मै कोमल हूँ ?" प्रबुद्ध ने प्रसन्न मुख होकर पूछा।

"हाँ! कम से कम शरीर से तो कोमल होई! हृदय की मुझे खबर नहीं।"[1] (विजय)

(ग) "वह बडा बदमाश आदमी है। गाँव भर उससे डरता है। उसके डर के मारे कोई स्त्री अकेली बाहर नहीं जाती। खैर जो हुआ सो हुआ, अब अकेली मत जाना।"[2] *(माघ की होली)*

कहानी मे गढ़े-गढ़ाये चरित्रो पर प्रकाश डाला जाता है, विकास की गुंजाइश कम रहती है। 'कौशिक' जी ने अपनी अनेक कहानियो—'ताई', 'विजय', 'शखनाद', 'मालती का प्रेम', सशोधन, तथा 'वीर श्रेष्ठ' आदि मे किसी दुर्घटना का सयोजन कर पात्रों के चरित्र मे आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित कर आदर्श चरित्रो की स्थापना की है।

'कौशिक' जी की कहानियो मे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की विधि से चरित्र-चित्रण उस रूप मे प्राप्त नही होता जैसा प्रसाद, प्रेमचन्द तथा अज्ञेय आदि की कहानियों मे उपलब्ध है। पात्रो के मनोभावो, अन्तर्द्वन्द्व तथा आन्तरिक विशेषताओ को 'कौशिक' जी ने विशेष रूप से वर्णन द्वारा प्रस्तुत किया है। व्यजित रूप मे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का इनके युग मे अभाव था। इनकी कहानियों मे मानव-जीवन की प्रवृत्तियो तथा सघर्षों का सुन्दर उल्लेख हुआ है।

कथोपकथन

कथोपकथन द्वारा कहानी के सुन्दरतम स्थलो को तर्क-वितर्क और प्रतिपादन द्वारा चमत्कारापूर्ण बनाया जाता है। पात्रो के चिंतन, साहस और बौद्धिक विकास का ज्ञान कराने मे इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। पात्रो के मनोभाव कथोपकथनो की लडियो मे गुँथकर सक्षेप मे उतना कह जाते हैं जितना स्पष्ट करने के लिए इतिवृत्तात्मक वर्णन मे पृष्ठ के पृष्ठ काले करने पर भी न कहा जा सके। कथोपकथन नाट्य-रचना के मूल साधन हैं परन्तु साधारणत इनका प्रयोग कहानी

---

१ 'कल्या' [कहानी सग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १७८।
२ 'माघ की होली' ,, ,, पृ० ५।

और उपन्यास में भी कम नहीं होता। इन के सौंदर्य से कहानी में गतिशीलता आती है। भावात्मक चित्रणों के स्थलों को उभारने में भी जिन सूक्ष्म भावों का विवेचन कथोपकथनों द्वारा किया जाता है, उनमें इतिवृत्तात्मक वर्णन की अपेक्षा अधिक सजीवता होती है। कहानी में संवादों का 'लघु-प्रसारी, वैदग्ध्यपूर्ण, आकर्षक और चमत्कारी प्रयोग ही इष्ट होता है।'[1]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में संक्षिप्त, आकर्षक तथा सारगर्भित संवादों या कथोपकथनों का ही अधिक प्रयोग किया है। यद्यपि कहीं कहीं लम्बे कथोपकथन भी आ गए हैं जहाँ कहानीकार की भावुक प्रवृत्ति प्रबल हो उठी है, परन्तु अधिकांशत इनके संवाद छोटे तथा परिस्थिति के अनुकूल हैं, निरर्थक नहीं। इनके द्वारा 'कौशिक' जी ने कहीं पात्रों चरित्र पर प्रकाश डाला है, कहीं घटनाओं को गतिशील बनाया है तो कहीं तर्क-वितर्कमयी उक्तियों द्वारा सिद्धान्त-प्रतिपादन के लिए भी इनका प्रयोग किया है। इनके कथोपकथनों का प्रयोग देखिये, कितने सशक्त प्रभाव पूर्ण एव उपयुक्त हैं :—

"माता—मैं सब सोच चुकी हूँ। तुझे मेरा कहना करना ही पड़ेगा।

राम०—माँ! तुम अपने मातृत्व और मेरे पुत्रत्व से अनुचित लाभ उठाना चाहती हो।

माता—मेरी आज्ञा ही न्याय है। तुझे मेरा कहना करना ही पड़ेगा।

राम०—(क्रुद्ध होकर) तो मैं भी कहता हूँ कि मैं नहीं करूँगा।"[2] (वन्ध्या)

ये संवाद माता तथा पुत्र के दृढ़ चरित्र की ओर संकेत करते हैं। डॉ० भागीरथ मिश्र के शब्दों में—"कौशिक जी अपनी कहानियों में कथोपकथन को सबसे अधिक महत्त्व देते हैं। उनका विचार है कि हमारा जीवन बातचीत में ही बीतता है अत. स्वाभाविकता लाने के लिए कथोपकथन के द्वारा ही अधिकांश कथानक और चरित्र का उद्घाटन करना चाहिए।"[3] सरलता, स्वाभाविकता तथा अभिनयात्मकता इनके संवादों की विशेषताएँ हैं और नाटकीय तत्वों का इनमें पूर्ण समावेश हुआ है। कहीं-कहीं कथोपकथनों के बीच में 'कौशिक' जी ने इस प्रकार के वाक्य—"पाठक समझ

---

१. 'कहानी का रचना-विधान'—डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० १२२।
२. 'वन्ध्या' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ५६।
३. 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास'—रामबहोरी शुक्ल और डॉ० भागीरथ मिश्र, पृ० २६६।

गए होंगे कि घनश्याम कौन है।"[1] या "पाठक समझ गए होंगे कि मालती के प्रति हमारे पूर्व-परिचित मित्र रावाकान्त सन्ना हैं।"[2] रख दिये हैं जो पाठक की कौतूहल वृत्ति में बाधक सिद्ध होते हैं।

वातावरण

कहानी के कथानक को सजाने-सँवारने तथा सजीव बनाने में परिस्थितियों का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। ये कथानक की क्रियाओं और परिणामों का तर्क-संगत क्रमान्यास उपस्थित करती है। इनका सीधा-सम्बन्ध वस्तु-विन्यास से रहता है। कहानी की एक स्थिति से दूसरी स्थिति तक पहुँचने में परिस्थितियों का विशेष योगदान रहता है। वर्तमान परिस्थितियाँ अपनी पूर्वपीठिका से प्रभावित होती हैं। इन्हीं के आधार पर रचना का गठन होता है। पूर्वपीठिका को कहानी के कथानक की आधार शिला के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए। इसका छायात्मक प्रभाव कहानी के सम्पूर्ण कथानक पर वर्तमान रहता है।

परिस्थिति तथा पूर्वपीठिका के पश्चात् कहानी की सामूहिकता को प्रभावशाली बनाने में वातावरण का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। कहानी के विविध प्रभावों को एक सूत्र में बाँधकर जो प्रभाव पाठक के मस्तिष्क में उभरता है वही कहानी का वातावरण है। डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में,—"वास्तविक जीवन देश, काल और जीवन की विभिन्न सत्-असत् परिस्थितियों से निर्मित होता है, अतएव इन तत्त्वों का एक स्थल पर सचयन और चित्रण करना ही कहानी में वातावरण उपस्थित करना है।"[3] वातावरण सामान्य और विशेष दो प्रकार का होता है। सामान्य वातावरण थोड़ा बहुत सभी कहानियों में वर्तमान होता है। यह देश-काल की परिस्थितियों का ज्ञान कराता है तथा प्रतिपाद्य-विषय का योगग्राहक रहता हैं। इसे विषय को पूर्ण करने वाला साधन मानना चाहिये। जहाँ वातावरण अपने विशेष रूप में प्रस्फुटित होता है वहाँ वह प्रतिपाद्य-विषय बन जाता है, कहानी के अन्य तत्व अंग रूप में प्रयुक्त होते है। ये कहानियाँ वातावरण-प्रधान होती हैं।

---

१. 'रक्षा-बन्धन' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १६३।
२. 'बन्ध्या ,, ,, पृ० ५।
३. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास'—पृ० ३४०।

'कौशिक' जी की कहानियों में वातावरण सामान्य रूप में आया है। इनकी कोई भी कहानी वातावरण प्रधान नहीं है। प्रसाद ने कई कहानियों में विशेष रूप से वातावरण का चित्रण किया है। 'कौशिक' जी की कहानियों में वातावरण कहानी के विषय तथा परिस्थिति के अनुकूल है और देश-काल का सजीव चित्र प्रस्तुत कर देता है। फ्रांस पर जर्मन के युद्ध की स्थिति में पेरिस के वातावरण का कितना सजीव चित्र अंकित किया है देखिये—

'पेरिस खाली हो रहा था। पेरिस से पश्चिमी फ्रांस की ओर जाने वाली स्पेशल ट्रेनें खचाखच भरी हुई छूट रही थीं। लोगों को साथ में केवल आवश्यक सामान ले जाने की आज्ञा थी। लोग अपने भरे-पूरे घरों की गृहस्थी-सम्बन्धी वस्तुओं को छोड़कर भाग रहे थे। कोई रोता था, कोई हाय-हाय करता था। ट्रेनों के अतिरिक्त मोटरें भी काफी तादाद में आदमियों को लेकर भाग रही थीं।"[१] (पेरिस की नर्तकी)

प्राकृतिक वातावरण का चित्रण करना 'कौशिक' जी को अभीष्ट नहीं था। कहानी प्रारम्भ करते समय कहीं-कहीं एक दो पंक्तियों में प्राकृतिक वातावरण उपस्थित कर दिया है, यथा—

'हेमन्त ऋतु की सन्ध्या थी। अस्ताचल पर लटकते हुए सूर्य की सुनहरी किरणें हरे-भरे खेतों को एक अपूर्व शोभा प्रदान कर रही थी।"[२] (गँवार)

"रात के आठ बज चुके थे। शुक्लपक्ष की चतुर्दशी का चन्द्रमा अपनी रौप्य रश्मियों द्वारा संसार को शीतल-शुभ्र प्रकाश प्रदान कर रहा था।"[३] (गुण ग्राहकता)

उद्देश्य

रचनाकार के समक्ष अपनी रचना को प्रारम्भ करने से पूर्व कोई निश्चित उद्देश्य होता है जिसकी पूर्ति के लिए उसे रचना की प्रेरणा मिली। यह उद्देश्य किसी परिस्थिति, पात्र, समस्या अथवा तथ्य विशेष के सामने आने पर लेखक के विचार और भावनाओं से मूर्त रूप धारण करता है, इसी मूर्त रूप को लेखक अपनी रचना में चित्रित करता है। लेखक का उद्देश्य कहीं किसी समस्या का समाधान प्रस्तुत करना होता है और कहीं किसी पात्र विशेष का मनोवैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत

---

१. "पेरिस की नर्तकी" [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ८६।
२. ,, ,, ,, ,, ११।

गए होंगे कि घनश्याम कौन है।"[1] या "पाठक समझ गए होंगे कि मालती के प्रति हमारे पूर्व परिचित मिस्टर राधाकान्त खन्ना हैं।"[2] रख दिये हैं जो पाठक की कौतूहल वृत्ति में बाधक सिद्ध होते हैं।

वातावरण

कहानी के कथानक को सजाने-सँवारने तथा सजीव बनाने में परिस्थितियों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये कथानक की क्रियाओं और परिणामों का तर्क-संगत क्रमान्वयन उपस्थित करती है। इनका सीधा-सम्बन्ध वस्तु-विन्यास से रहता है। कहानी की एक स्थिति से दूसरी स्थिति तक पहुँचने में परिस्थितियों का विशेष योगदान रहता है। वर्तमान परिस्थितियाँ अपनी पूर्वपीठिका से प्रभावित होती हैं। इन्हीं के आधार पर रचना का गठन होता है। पूर्वपीठिका को कहानी के कथानक की आधार शिला के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए। इसका छायात्मक प्रभाव कहानी के सम्पूर्ण कथानक पर वर्तमान रहता है।

परिस्थिति तथा पूर्वपीठिका के पश्चात् कहानी की सामूहिकता को प्रभाव-शाली बनाने में वातावरण का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। कहानी के विविध प्रभावों को एक सूत्र में बाँधकर जो प्रभाव पाठक के मस्तिष्क में उभरता है वही कहानी का वातावरण है। डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में,—"वास्तविक जीवन देश, काल और जीवन की विभिन्न सत्-असत् परिस्थितियों से निर्मित होता है, अतएव इन तत्वों का एक स्थल पर सचयन और चित्रण करना ही कहानी में वातावरण उपस्थित करना है।"[3] वातावरण सामान्य और विशेष दो प्रकार का होता है। सामान्य वातावरण थोड़ा बहुत सभी कहानियों में वर्तमान होता है। यह देश-काल की परिस्थितियों का ज्ञान कराता है तथा प्रतिपाद्य विषय का योगग्राहक रहता है। इसे विषय को पूर्ण करने वाला साधन मानना चाहिये। जहाँ वातावरण अपने विशेष रूप में प्रस्फुटित होता है वहाँ वह प्रतिपाद्य-विषय बन जाता है, कहानी के अन्य तत्व गौण रूप में प्रयुक्त होते हैं। ये कहानियाँ वातावरण प्रधान होती हैं।

---

१ 'रक्षा-बन्धन' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १६३।
२. 'बन्ध्या ,, ,, पृ० ५।
३. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास'—पृ० ३४०।

'कौशिक' जी की कहानियों में वातावरण सामान्य रूप में आया है। इनकी कोई भी कहानी वातावरण प्रधान नहीं है। प्रसाद ने कई कहानियों में विशेष रूप से वातावरण का चित्रण किया है। 'कौशिक' जी की कहानियों में वातावरण कहानी के विषय तथा परिस्थिति के अनुकूल है और देश-काल का सजीव चित्र प्रस्तुत कर देता है। फ्रांस पर जर्मन के युद्ध की स्थिति में पेरिस के वातावरण का कितना सजीव चित्र अंकित किया है देखिये—

'पेरिस खाली हो रहा था। पेरिस से पश्चिमी फ्रांस की ओर जाने वाली स्पेशल ट्रेनें खचाखच भरी हुई छूट रही थीं। लोगों को साथ में केवल आवश्यक सामान ले जाने की आज्ञा थी। लोग अपने भरे-पूरे घरों की गृहस्थी-सम्बन्धी वस्तुओं को छोड़कर भाग रहे थे। कोई रोता था, कोई हाय-हाय करता था। ट्रेनों के अतिरिक्त मोटरें भी काफी तादाद में आदमियों को लेकर भाग रही थीं।"[1] (पेरिस की नर्तकी)

प्राकृतिक वातावरण का चित्रण करना 'कौशिक' जी को अभीष्ट नहीं था। कहानी प्रारम्भ करते समय कहीं-कहीं एक दो पंक्तियों में प्राकृतिक वातावरण उपस्थित कर दिया है, यथा—

"हेमन्त ऋतु की सन्ध्या थी। अस्ताचल पर लटकते हुए सूर्य की सुनहरी किरणें हरे-भरे खेतों को एक अपूर्व शोभा प्रदान कर रही थीं।"[2] (गँवार)

"रात के आठ बज चुके थे। शुक्लपक्ष की चतुर्दशी का चन्द्रमा अपनी रौप्य रश्मियों द्वारा संसार को शीतल-शुभ्र प्रकाश प्रदान कर रहा था।"[3] (गुण ग्राहकता)

उद्देश्य

रचनाकार के समक्ष अपनी रचना को प्रारम्भ करने से पूर्व कोई निश्चित उद्देश्य होता है जिसकी पूर्ति के लिए उसे रचना की प्रेरणा मिलती है। यह उद्देश्य किसी परिस्थिति, पात्र, समस्या अथवा तथ्य विशेष के सामने आने पर लेखक के विचार और भावनाओं से मूर्त रूप धारण करता है, इसी मूर्त रूप को लेखक अपनी रचना में चित्रित करता है। लेखक का उद्देश्य कहीं किसी समस्या का समाधान प्रस्तुत करना होता है और कहीं किसी पात्र विशेष का मनोवैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत

करना। इनके अतिरिक्त कुछ आकर्षक घटनाओं तथा दृश्यों को देखकर भी उन्हें व्यक्त करने के लिए लेखक की अन्तरात्मा व्याकुल हो उठती है। इन सभी के पीछे लेखक का एक मूलभूत उद्देश्य निहित रहता है जिसकी छाया न्यूनाधिक रूप में उसकी प्रत्येक रचना में चित्रित हो उठती है।

उद्देश्य दो प्रकार का होता है —प्रथम कला का प्रदर्शन—इसमें लेखक का एकांगी स्वरूप दृष्टिगोचर होता है जिसमें कलाकार केवल सौंदर्य का उपासक मात्र बनकर रह जाता है। दूसरा आदर्श की कल्पना—इसमें लेखक काव्य-सौंदर्य के साथ-साथ उसकी उपादेयता को भी महत्त्व देता है। ऐसा करते समय समाज और राष्ट्र के हित की भावना उसकी दृष्टि में रहती है। प्राचीन साहित्यकारों ने जितनी भी रचनाएँ की उनमें समाज के कल्याण की भावना मूल रूप से निहित पाई जाती है।

'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में सर्वत्र आदर्शात्मक सुधारवादी उद्देश्य रहा है। यह आदर्श कहीं पात्रों के चरित्र को उत्कृष्ट बनाने में प्रस्फुटित हो उठा है तो कहीं उनके कार्यों में झलक उठता है। इसके अतिरिक्त कहीं यथार्थ का चित्रण करना 'कौशिक' जी का उद्देश्य रहा है, कहीं पात्रों के कार्यों, परिणामों तथा चरित्र-परिवर्तन द्वारा आदर्श उपस्थित करना रहा है। कुछ कहानियों में 'कौशिक' जी ने ऐसी पंक्तियाँ वर्णित की हैं जिनसे कहानीकार का उद्देश्य स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है, जैसे 'ताई' कहानी में यह दिखाना इनका उद्देश्य रहा है—"ममत्व से प्रेम उत्पन्न होता है और प्रेम से ममत्व। इन दोनों का साथ चोली दामन का-सा है।"[१] 'पेरिस की नर्तकी' कहानी में लेखक का उद्देश्य प्रसिद्ध साम्यवादी नेता मोशिये सावेलिये के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है—"जो सौंदर्य तथा कला हमें नपुंसक बनाती है, हमारे शरीर में कायरता का संचार करती है और इससे भी बढ़कर जो हमारे साथ, अपने देश के साथ विश्वासघात करती है उस सौन्दर्य तथा कला का नष्ट हो जाना ही अच्छा है।'[२] 'नरपशु' कहानी में 'कौशिक' जी का उद्देश्य यह रहा है—"ईश्वर प्रोफेसर साहब और उनके-से नर-पशुओं को इतनी बुद्धि दे कि वे स्त्री को मनुष्य समझें और साथ ही उनके हृदय में इतना बल दे कि वे अपनी बुद्धि से लाभ उठा सकें।"[३] 'भक्षक-रक्षक' कहानी में कहानीकार का उद्देश्य यह दिखाना

---

१ 'चित्रशाला' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ४८।
२ 'पेरिस की नर्तकी' ,, ,, ,, ९७।
३ 'चित्रशाला' ,, ,, ,, १०३।

है कि "कभी-कभी भक्षक भी रक्षक हो जाता है।"[1] इसी प्रकार अन्य कहानियों में 'कौशिक' जी ने इसी प्रकार वर्णित रूप में या क्रिया-कलापों द्वारा संकेत रूप में अपने उद्देश्य का निर्वाह किया है। इनका सम्पूर्ण कथा साहित्य उद्देश्य-प्रधान है।

भाषा शैली

लेखक के विचार तथा भावनाओं को पाठक तक पहुँचाने वाला, रचना के विविध अंगों की पुष्टि का साधन भाषा है। कहानी-लेखन में भाषा जितनी अधिक व्यंजक होती है, उतनी ही सक्षेप में अधिकाधिक भावों और विचारों को स्पष्ट करने में सफल होती है। भाषा-सौष्ठव से अभिप्राय विषयानुकूल सार्थक, शब्दों के चयन, कलात्मक वाक्य-विन्यास, पदों के उपयुक्त गठन और विराम आदि चिन्हों के स्थानानुकूल प्रयोगों से है। विधा-विशेष के लेखन में भाषा-विशेष का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त विषय तथा पात्रों का भाषा से और भी घनिष्ट सम्बन्ध होता है। भाषा विषय और पात्रानुकूल होनी चाहिए।

शैली लेखक की आन्तरिक तथा बाह्य प्रतिभा का मूर्त रूप है। आन्तरिक प्रतिभा से हमारा तात्पर्य उसके बौद्धिक तत्व, भाव-तत्व तथा कल्पना-तत्व से है। बाह्य प्रतिभा के अन्तर्गत लेखक का वह चमत्कारिक स्वरूप हमारे समक्ष आता है जिसके द्वारा वह विषयोपयुक्त भाषा और कलात्मक प्रयोगों के द्वारा रचना में चमत्कार उत्पन्न करता है। शैली पर लेखक के व्यक्तित्व की छाप होनी चाहिए। शैली के विशेष प्रयोगों के कारण ही पाठक किसी रचना को पढ़कर यह उठता है कि 'यह अमुक लेखक की कृति है।' बफन के शब्दों में 'शैली ही व्यक्ति है।' भाषा की दृष्टि से शैली तीन प्रकार की मानी जाती है—(१) साधारण मुहावरेदार भाषा शैली, (२) अलकृत भाषा शैली, (३) संस्कृत गर्भित भाषा-शैली।

'कौशिक' जी ने साधारण मुहावरेदार भाषा-शैली का प्रयोग अपने कथा-साहित्य के अन्तर्गत किया है। प्रेमचन्द के कथा साहित्य में भी इसी भाषा शैली का प्रयोग हुआ है। 'कौशिक' जी हिन्दी, संस्कृत, फारसी, उर्दू, बंगला, अरबी तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं के मर्मज्ञ विद्वान थे। इन सभी भाषाओं पर इनका विशेष अधिकार था और इन सभी के शब्द आपकी लेखनी के संकेत पर साहित्य सरोवर में यत्र-तत्र खिल उठे हैं। इनकी भाषा कहानियों की रोचकता, भावगम्यता तथा

---

१. 'रक्षा-बन्धन' [कहानी संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १२६।

'कौशिक' जी की भाषा पात्रानुकूल है। इनके शिक्षित पात्र साहित्यिक भाषा का प्रयोग करते हैं, अशिक्षित तथा साधारण ग्रामीण पात्र ग्रामीण और साधारण असाहित्यिक भाषा का प्रयोग करते हैं। मुसलमान पात्रों की भाषा में उर्दू, फारसी तथा अरबी भाषाओं के शब्दों की भरमार है, बंगाली पात्र बंगला भाषा के शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं तथा अंग्रेजी पढ़े-लिखे पात्रों की भाषा में अंग्रेजी के शब्दों तथा वाक्यों का प्रयोग मिलता है। इन सभी भाषाओं का प्रयोग देवनागरी लिपि के माध्यम से किया गया है। 'कौशिक' जी के विभिन्न पात्रों की भाषाओं के कुछ प्रयोग नीचे देखिये —

(क) "ननकू भइया, मो तुम का मेहरियन की तना (तरह) करै लागत हो मनई पै मरे मेहेरिया रोवत है, मेहेरिया के मरे कहाँ (कहीं) मनई नहीं रोवत हैं। मेहेरिया तो मरै (मरा) ही करत हैं।"[१] (ननकू चौधरी)

(ख) "झंगनू काका बोले— "अब भागते क्यों हो ? बैठो रहो। हम मठिया गये हैं ? मे सारऊ अभी बारह ही बरस के हैं— चोर कहीं का। बच गया ! यदि कहीं भल्ली पड जाती तो छठी का दूध याद आ जाता।"[२] (मोह)

(ग) 'खुदा वहाँ की जबान ही नहीं समझ में आती— और वहाँ के आदमी—इलाही तोबा। इस कदर गँवार, बदतमीज कि क्या अर्ज करूँ ! हमें तो चाहे अल्लाह तआला दोजख में ही भेजे, मगर वहाँ भी लखनऊ वालों का ही साथ अता फरमावे।"[३] (तमाचा)

(घ) "बाउन जी बोले—"मोहनलाल स्टेशन मास्टर आवे छे।"

"आज वह दिखा पड़ी आयो।" मसेरवी जी ने कहा।

"साहब मागत छे।"

"ते तो बरोबर छे।"[४] (नाटक)

(ङ) "यह क्या बात ? यह तो गजेटेड हाली डे है।"[५] (सोरानवार)

विचारों और भावनाओं को वहन करने में सर्वथा उपयुक्त है। इसमें सरलता और सुबोधता के गुण सर्वत्र विद्यमान हैं। 'कौशिक' जी ने अपनी भाषा में जिन शब्दों का प्रयोग किया वे कथा-साहित्य के पाठकों के लिए बुद्धिगम्य हैं। उनको समझने के लिए कोष इत्यादी का आश्रय नहीं लेना पड़ता। इसीलिये कथा-साहित्य के क्षेत्र में आपका यश दिन-दूना, रात-चौगुना, बढ़ता गया। 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में यत्र-तत्र अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग मिलता है, परन्तु वह इतना अधिक नहीं है कि खटकने लगे। इन शब्दों का प्रयोग लेखक ने भाषा के प्रवाह में गतिशीलता लाने के लिए किया है और निश्चय ही उससे भाषा की प्रभावोत्पादकता में वृद्धि हुई है। लेखक ने बड़ी सतर्कता के साथ ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिन्हे समझने में पाठक कठिनाई अनुभव न करें। संयोगवश यदि कहीं कठिन शब्द आ भी गए हैं तो उनके साथ कोष्टक में हिन्दी-अर्थ दे दिये गये हैं। इसी प्रकार कुछ स्थानों पर अशुद्ध अथवा ग्रामीण शब्दों का प्रयोग किया है तो उनके शुद्ध रूप भी कोष्ठक में दिये गए हैं। उदाहरण के लिए देखिये —

अरबी के शब्द—इत्तिफाक (मेल), मजहबी (धार्मिक), जहमत (झगड़े), शमा (दीपक)।

फारसी के शब्द—गुमराह (पथभ्रष्ट), बरहा (अनेक बार), फख्र (गौरव), बजा (उचित)।

अंग्रेजी के शब्द—पीरियड (घण्टा) ईडियट (बेवकूफ), बीफ (गाय का मांस), मैगजीन (मासिक पत्र), मटन (बकरे का मांस)।

अशुद्ध शब्द—भिच्छावित्त (भिक्षावृत्ति), परोजन (प्रयोजन), सरन (शरण), सवाद (स्वाद)।

कुछ स्थलों पर 'कौशिक' जी ने अन्य भाषाओं के ऐसे कठिन तथा दुरुह शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग किया है जो साधारण पाठको की समझ से बाहर के हैं। उनके हिन्दी अर्थ भी नहीं दिये गये हैं जैसे—

"अजी, यह तो जाहिर बात है, मजहबी तअस्सुब ही इन झगड़ो की बुनियाद है। हिन्दू और मुसलमान, दोनों में ऐसे सैकड़ो आदमी मिलेंगे, जो इन्तहा के तअस्सुबी है। तअस्सुब को ये लोग मजहब का जेवर समझते है। ये ही लोग झगड़ा-फसाद कराने की कोशिश करते हैं।"[1] (कर्तव्य-पालन)

---

१. 'साथ का होला'—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १०६।

'कौशिक' जी की भाषा पात्रानुकूल है। इनके शिक्षित पात्र साहित्यिक भाषा का प्रयोग करते हैं, अशिक्षित तथा साधारण ग्रामीण पात्र ग्रामीण और साधारण असाहित्यिक भाषा का प्रयोग करते हैं। मुसलमान पात्रों की भाषा में उर्दू, फारसी तथा अरबी भाषाओं के शब्दों की भरमार है, बंगाली पात्र बंगला भाषा के शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं तथा अंग्रेजी पढ़े-लिखे पात्रों की भाषा में अंग्रेजी के शब्दों तथा वाक्यों का प्रयोग मिलता है। इन सभी भाषाओं का प्रयोग देवनागरी लिपि के माध्यम से किया गया है। 'कौशिक' जी के विभिन्न पात्रों की भाषाओं के कुछ प्रयोग नीचे देखिये —

(क) "ननकू भइया, यो तुम का मेहरियन की तना (तरह) करै लागन हौ मनई के मरे मेहेरिया रोवत है, मेहरिया के मरे कहौं (कहीं) मनई नहीं रोवत हैं। मेहेरिया तो मरै (मरा) ही करत हैं।"[1] (ननकू चौधरी)

(ख) "अँगनू काका बोले— "अब भागते क्यों हो? बैठो रहो। हम सठिया गये हैं? ये सरऊ अभी बारह ही बरस के हैं— चोर कहीं का। बच गया! यदि कहीं भल्ली पड़ जाती तो छठी का दूध याद आ जाता।"[2] (मोह)

(ग) "वल्लुदा वहाँ की जबान ही नहीं समझ में आती— और वहाँ के आदमी—इलाही तोबा। इस कदर गँवार, बदतमीज कि क्या अर्ज करूँ! हमें तो चाहे अल्लाह तआला दोज़ख में ही भेजे, मगर वहाँ भी लखनऊ वालों का ही साथ अता फरमाये।"[3] (तमाचा)

(घ) "ठाकुर जी बोले—"मोहनलाल स्टेशन मास्टर आवे छे।"

"आज वह दिवस पछी आयो।" नसीरखाँ जी ने कहा।

"साहब गाएग छे।"

"ते तो बरोबर छे।"[4] (नाटक)

(ङ) "यह क्या बात? यह तो गजेटेड हाली डे है।"[5] (सौदा)

---

१ 'कल्लोल' [कहानी संग्रह]—पृ० १५७-१५८।
२. '[illegible]' ,, —पृ० १२२।
३. 'चित्र कूप' ,, —पृ० ११।
४. '[illegible]' ,, —पृ० ११३-११४।
५ 'प्रतिशोध' ,, —पृ० १०६।

उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि 'कौशिक' जी को पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग में अत्यधिक सफलता मिली है। तत्सम शब्दों का प्रयोग इनकी भाषा में अत्यन्त कुशलता के साथ हुआ है। वृष्टि, प्रविष्ट, यथेष्ट, अष्टादश, कदाचित्, प्रत्युत्तर, सदस्यगण प्रतिष्ठित, निरुत्तर, सज्जन, दीर्घ आदि शब्द संस्कृत से यथावत् रूप में ग्रहण किये हैं जिनके प्रयोग ने इनकी भाषा को यथेष्ट साहित्यिकता प्रदान की है। 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियों में साधारण बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है अतः अनेक स्थलों में निरर्थक तथा अनगढ़ शब्दों का भी स्वतः समावेश हो गया है जैसे सटर-पटर, मेले-ठेले, भोजन-वोजन, उन्नति-सुन्नति, लस्टम-पस्टम, श्लोक श्लोक' सुफल-उफल या सूटेड-बुटेड आदि। कुछ आलोचकों ने 'कौशिक' जी की भाषा में प्रयुक्त ग्रामीण-अनगढ़ शब्दावली तथा विदेशी शब्दों के प्रयोग को अनुचित समझा है। इस विषय में केवल इतना ही समझ लेना पर्याप्त है कि अनगढ़ शब्दों का प्रयोग अनगढ़ पात्रों के मुख से कराया गया है और अन्य *भाषाओं का प्रयोग पात्रानुकूल है, जो स्वाभाविकता की दृष्टि से उपयुक्त है। अतः* यह भाषा-सम्बन्धी दोष न होकर कहानीकार की विशेष योग्यता का परिचायक है। औचित्य की सीमा का कहीं अतिक्रमण नहीं किया गया है। पद-विन्यास सुगठित है और प्रवाह में कहीं बाधा उपस्थित नहीं होती। 'कौशिक' जी की भाषा कहानी-विधा के सर्वथा अनुकूल है। जिस समाज का चित्रण किया गया है तथा जो परिस्थितियाँ समाज में व्यक्त हैं उनके अनुरूप ही शब्दों का चयन और वाक्यों का गठन इनकी भाषा में दृष्टिगत होता है। श्री सद्‌गुरुशरण अवस्थी जी के शब्दों में —"विषय की दृष्टि से 'कौशिक' जी चाहे पिछड़े हुए कहानी लेखक हो जायँ, परन्तु भाषा की दृष्टि से आप हमेशा हरे हैं।"[1]

'कौशिक' जी ने अपने कथा साहित्य में सामान्यतया मुहावरेदार भाषा-शैली का प्रयोग किया है। रचनाशैली को प्रभावोत्पादक बनाने में सुगठित वाक्य-विन्यास तथा उचित शब्दों का चयन जितना आवश्यक है उतना ही उसमें चमत्कार उत्पन्न करने के लिए मुहावरे तथा लोकोक्तियों का प्रयोग भी साहित्यकारों ने आवश्यक माना है। इनका प्रयोग भाषा में अलंकारिता के अभाव की पूर्ति करता है। जिस प्रकार आभूषण में जड़ा हुआ मोती उसके सौंदर्य की वृद्धि में सहायक होता है

१. 'हिन्दी गद्य गाथा'—पृ० १०१।

उसी प्रकार भाषा में प्रयुक्त मुहावरे और लोकोक्तियाँ उसे रोचक बनाने में सहायक सिद्ध होती है। इनकी मुहावरेदार भाषा का एक उदाहरण नीचे देखिये—

"नया मुसलमान प्याज बहुत खाता है' की कहावत के अनुसार त्रिपाठी जी मिश्र बनकर कान्यकुब्जता की खराद पर चढ़ गये। एक तो कड़वा करेला दूसरे नीम चढ़ा। एक तो मिश्र जी पहले से ही कान्यकुब्ज थे उस पर हो गये मुरादाबादी मिश्र। फिर क्या कहना था। ब्राह्मणत्व का पूरा ठेका उन्हीं को मिल गया।"[१] (हवा)

'कौशिक' जी की रचना-शैली में लोकोक्तियों तथा मुहावरों का इतना बाहुल्य नहीं है कि पाठक को खटकने लगे। इनका प्रयोग लेखक ने बहुत नपे-तुले ढंग से किया है। जिससे निश्चय ही कथाओं की रोचकता में अभिवृद्धि हुई है। अनेक सुन्दर लोकोक्तियों तथा मुहावरों ने इनकी भाषा में सजीवता ला दी है, नीचे कुछ प्रयोग द्रष्टव्य हैं —

लोकोक्तियों का प्रयोग—

(क) डेढ़ सौ महीना मिला है। आनन्द से खाते-पीते हैं। न ऊधो का लेना, न माधो का देना।"[२] (पथनिर्देश)

(ख) "वही कहावत है—"एक टका मेरी थाली, नथ गढ़ाऊँ कि बाली ?" कुल बीस हजार रुपल्ली, उसमें मोटर भी हो, कोठी भी हो, बाग भी हो।"[३] (पथ-निर्देश)

(ग) "इसी कल्पना के बल पर कवि लोग बड़ी-बड़ी अद्‌भुत बातें सोच डालते हैं—जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि।"[४] (पथ-निर्देश)

(घ) 'नीच जाति के पास जहाँ चार पैसे हुए, वहाँ फिर वह अँगूठों के बल चलने लगता है। कहावत ही है—"गगरी दाना, सूद उतराना।"[५] (ईश्वर का डर)

(ङ) "कोई मरे या जिये मुहल्ले वालों को कुछ व्यापता ही नहीं। तीन लोक से मथुरा न्यारी।"[६] (लाला की होली)

(ग) 'केवल पुरानी लकीर पीटने से काम नहीं चलता। मैं लकीर का फकीर नहीं हूँ।"[1] (पाप का फल)

उक्त लोकोक्तियों तथा मुहावरों के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने यथास्थान उर्दू, फारसी और संस्कृत आदि के मुहावरे तथा लोकोक्तियों आदि का भी प्रयोग किया है तथा साथ ही उनका हिन्दी अर्थ दिया है, यथा—

'ओ रवेशतन गुमस्त केरा रहबरी कुनद'। जो खुद रास्ता भूला हुआ है वह दूसरों को रास्ता क्या बता सकता है।"[2]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में अधिकांशत वर्णनात्मक तथा नाटकीय शैली का प्रयोग किया है। इनके अतिरिक्त अनेक स्थलों पर मानव जीवन की व्याख्या तथा समाज पर व्यंग्य प्रस्तुत करने के लिए विवेचनात्मक, आवेशमयी, व्यंग्य पूर्ण तथा प्रश्नोत्तर से युक्त शैलियों का सुन्दर प्रयोग इनकी कहानियों में उपलब्ध होता है। इनकी शैली के कुछ उदाहरण नीचे द्रष्टव्य हैं —

प्रश्नोत्तर से युक्त शैली—

'वे सच्चे सपूत कौन थे ? वे लोग थे—प्रिंस-आफ आरेंज, काउट-रैंसूर तथा कालूं। आह कालूं ? जिसने देश-प्रेम के आगे देश के प्रति अपने कर्त्तव्य, कर्त्तव्य के आगे अपनी प्रेमिका को ठुकरा दिया—नहीं, उसका वध किया। क्यों वध किया ? इसलिए कि वही पतिघातिनी—वही देशद्रोहिणी तो उनकी सारी चेष्टाओं पर पानी फेर गई। वही कालूं—देश का चमकता हुआ रत्न !"[3] (देशभक्ति)

समास गुम्फित संस्कृत-निष्ठ शैली—

"पाठक, आश्चर्य मत कीजिए, यह वही मलिना, धूलि-धूमरिता, जीर्ण-शीर्ण-वस्त्राच्छादिता, अर्द्ध-नग्ना, राम लाल की कन्या है।"[4] (परिणाम)

आवेशमयी शैली—

"हाँ ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है, जैसा प्रतिद्वन्द्वी मनुष्य को बड़े सौभाग्य से मिलता है। ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है, जिस पर मनुष्य गर्व कर सकता है। वह ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है

---

१ 'कल्लोल' [कहानी संग्रह]—पृष्ठ ७१।
२. 'प्रतिशोध' ,, ,, ८४।
३ 'कौशिक जी की इक्कीस कहानियाँ'—४
४. 'साथ की होली — [कहानी संग्रह]

(न) "बुढ़ापे में अहिंसा लेकर बैठे हैं। वही मगल है बूढ़ी पतुरिया तुलसी की माला।"[१] (अहिंसा)

(घ) "उँह तुम्हें मारेगा। बाप न मारी मिढकी बेटा तीर अन्दाज।[२] (वीर श्रेष्ठ)

(ज) "कहीं ऐसा न हो कि दोनों दीन से गये पाँडे न हलवा मिला न माँड़े। सिनाब भी छोड़े और एसेम्बली की सीट भी न मिले।"[३] (अवसरवाद)

मुहावरों का प्रयोग —

(क) हमला करना खालाजी का घर नहीं है। दाँत खट्टे हो जायेंगे।"[४] (कर्त्तव्य-पालन)

(ख) "मुसलमान हिन्दुओं के और हिंदु मुसलमानों के रक्त के प्यासे हो रहे थे।"[५] (कर्त्तव्य-पालन)

(ग) 'पत्रकार जो बात कह डालता है वह पत्थर की लकीर हो जाती है उसे कोई मिटा नहीं सकता।"[६] (पत्रकार)

(घ) "यारो यह पड़वा तो अब गिरगिट की तरह रग बदल रहा है।"[७] (अध्यापक की भूल)

(ङ) 'लीला बेचारी पर सैकड़ो घड़े पानी पड गए-मारे लज्जा के पसीने-पसीने हो गई, परन्तु मुख से कुछ न कहा।"[८] (सौंदर्य)

(च) "यदि यह यहाँ रही, तो हमारे मुख पर कालिख पुत जायेगी।"[९] (नेपथ्य मे)

(छ) "वह हशमतअली जिसका नाम मात्र सुनने से बड़े-बड़े हेकड़ों का पित्ता-पानी हो जाता था—चन्द्रशेखर जैसे साधारण तथा दुर्बल शरीर के व्यक्ति के सामने सिहर उठा।"[१०] (कर्त्तव्य-बल)

---

१ 'ईश्वरीय दण्ड' [कहानी सग्रह]—पृष्ठ १६४।
२ 'कल्लोल' „ „ १८४।
३. 'रक्षा बन्धन „ „ १५२।
४. 'साध की होली' „ „ १०८।
५ „ „ „ ११३।
६. 'ईश्वरीय दण्ड „ „ ४७।
७ „ „ „ ६२।
८. 'कौशिक जी की इक्कीस कहानियाँ „ ७७।
९. „ „ ७६-७७।
१० 'कल्लोल' „ ८।

(ग) 'केवल पुरानी लकीर पीटने से काम नहीं चलता। मैं लकीर का फकीर नहीं हूँ।"[1] (पाप का फल)

उक्त लोकोक्तियों तथा मुहावरों के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने यथास्थान उर्दू, फारसी और संस्कृत आदि के मुहावरे तथा लोकोक्तियों आदि का भी प्रयोग किया है तथा साथ ही उनका हिन्दी अर्थ दिया है, यथा—

'ओ स्वेशतन गुमस्त केरा रहबरी कुनद'। जो खुद रास्ता भूला हुआ है वह दूसरों का रास्ता क्या बता सकता है।"[2]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में अधिकांशतः वर्णनात्मक तथा नाटकीय शैली का प्रयोग किया है। इनके अतिरिक्त और स्थलों पर मानव जीवन की व्याख्या तथा समाज पर व्यंग्य प्रस्तुत करने के लिए विवेचनात्मक, आवेशमयी, व्यंग्य पूर्ण तथा प्रश्नोत्तर से युक्त शैलियों का सुन्दर प्रयोग इनकी कहानियों में उपलब्ध होता है। इनकी शैली के कुछ उदाहरण नीचे द्रष्टव्य हैं—

प्रश्नोत्तर से युक्त शैली—

'वे सच्चे सपूत कौन थे? वे लोग थे—प्रिन्स-आफ आरेंज, काउट-रैमूर तथा कार्लू। आह कार्लू? जिसने देश-प्रेम के आगे देश के प्रति अपने कर्त्तव्य, कर्त्तव्य के आगे अपनी प्रेमिका को ठुकरा दिया—नहीं, उसका वध किया। क्यों वध किया? इसलिए कि वही पतिघातिनी—वही देशद्रोहिणी तो उसकी सारी चेष्टाओं पर पानी फेर गई। वही कार्लू—देश का चमकता हुआ रत्न!"[3] (देशभक्ति)

समास गुम्फित संस्कृत-निष्ठ शैली—

"पाठक, आश्चर्य मत कीजिए, यह वही मलिना, धूलि-धूसरिता, जीर्ण-शीर्ण-वस्त्राच्छादिता, अर्द्ध-नग्ना, राम लाल की कन्या है।"[4] (परिणाम)

आवेशमयी शैली—

'हाँ ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है, जैसा प्रतिद्वन्द्वी मनुष्य को बड़े सौभाग्य से मिलता है। ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है जिस पर मनुष्य गर्व कर सकता है। वह ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है

---

१ 'कल्लोल' [कहानी संग्रह]—पृष्ठ २६।
२ 'प्रतिशोध' ,, ,, ८६।
३ 'कौशिक जी की इक्कीस कहानियाँ—पृ० ६।
४. 'साथ की होली — [कहानी संग्रह]—पृ० २१।

कि ईश्वर सबको ऐसा ही प्रतिद्वन्द्वी दे। जब तक वह मेरे सामने रहा, तब तक मेरी कविता की उन्नति हुई।"[१] (सच्चा कवि)

विवेचनात्मक शैली—

"जो वस्तु मनुष्य को प्राप्त हो जाती है, उसका मूल्य, उसका महत्त्व, उसकी दृष्टि मे कुछ नही रहता, फिर वह चाहे जितनी मूल्यवान क्यो न हो चाहे जितनी दुष्प्राप्य! मनुष्य सदैव उसी वस्तु की अभिलाषा मे ठडी साँसे भरता है, जो उसे प्राप्त नही, जो उसे नसीब नही, वह चाहे जितनी साधारण हो, चाहे जितनी मामूली हो। एक लखपती मनुष्य के लिए हजार-दो हजार रुपये कोई चीज नही। क्यो? इसलिए कि रुपये उसके पास हैं, उसे प्राप्त हैं। परन्तु जिसके पास सौ रुपये भी नही, उसके लिये दो हजार न्यामत हैं, क्योकि उसके लिये दुष्प्राप्य है। ससार का यही नियम है, यही चलन है।"[२] (पथ-निर्देश)

'कौशिक' जी की विवेचनात्मक शैली मे वर्णनात्मक शैली की अपेक्षा अधिक प्राञ्जलता तथा गभीरता है। प्रश्न और उदाहरणो के द्वारा तर्कों की पुष्टि की गई है जिससे भाषा सशक्त हो गई है।

'कौशिक' जी की भाषा शैली अत्यन्त सशक्त, प्राणवान तथा प्रवाहमयी है। स्वाभाविक बोलचाल की भाषा-शैली मे इन्होने अपने कथा-साहित्य की रचना की है। राजेन्द्रसिंह गौड के शब्दो मे—"भाषा और शैली की दृष्टि से भी उनकी समस्त रचनाएँ हिन्दी की अमूल्य निधि हैं।"[३]

'कौशिक' जी के कथा साहित्य के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि इनकी कहानियों का रचना-विधान कुछ दोषो के होने पर भी सर्वथा सुसगठित एवं सुन्दर है। इनकी कहानियो के कथानक स्वाभाविक गति से प्रारम्भ, मध्य तथा चरम-सीमा से विकसित होते हुए पर्यवसान की ओर बढते हैं। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से इनकी कहानियाँ प्रारम्भिक कहानी-कला का आभास देती है। कथोपकथनो का सौदर्य इनकी कहानियो मे सर्वत्र विद्यमान है। वातावरण का चित्रण 'कौशिक' जी

---

१. 'साव की होली' [कहानी-सग्रह]— पृष्ठ ७२।
२. पथ निर्देश [कहानी-सग्रह]— पृ० १८।
३ 'हमारे-लेखक'—पृ० ३३८।

ने कहानियों में प्रस्तुत युग एवं समाज की दृष्टि से किया है। इनकी कहानियों का उद्देश्य प्रेमचन्द की तरह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना ही रहा है। भाषा-शैली सर्वथा कहानियों के पात्रों तथा समस्याओं आदि के उपयुक्त है। 'कौशिक' जी की कहानी-कला प्रेमचन्द की कहानी कला के सदृश ही है। अति-आधुनिक कथा-शिल्प की दृष्टि से कौशिक' जी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए उनमें दोषों तथा न्यूनताओं की खोज करना अनावश्यक तथा अनुपयुक्त है। अपने युग की कहानी-कला तथा रचना विधान की दृष्टि से इनकी कहानियाँ उत्तम कोटि की हैं। हिन्दी कहानी-कला के विकास में इनकी कहानियों का महत्त्व सर्वोपरि है।

कि ईश्वर सबको ऐसा ही प्रतिद्वन्द्वी दे। जब तक वह मेरे सामने रहा, तब तक मेरी कविता की उन्नति हुई।"[1] (सच्चा कवि)

विवेचनात्मक शैली—

"जो वस्तु मनुष्य को प्राप्त हो जाती है उसका मूल्य, उसका महत्व, उसकी दृष्टि मे कुछ नही रहता, फिर वह चाहे जितनी मूल्यवान क्यो न हो चाहे जितनी दुष्प्राप्य। मनुष्य सदैव उसी वस्तु की अभिलाषा मे ठंडी साँसे भरता है, जो उसे प्राप्त नही, जो उसे नसीब नही, वह चाहे जितनी साधारण हो, चाहे जितनी मामूली हो। एक लखपती मनुष्य के लिए हजार-दो हजार रुपये कोई चीज नही। क्यो ? इसलिए कि रुपये उसके पास हैं, उसे प्राप्त हैं। परन्तु जिसके पास सौ रुपये भी नही, उसके लिये दो हजार न्यामत हैं, क्योकि उसके लिये दुष्प्राप्य है। ससार का यही नियम है, यही चलन है।"[2] (पथ-निर्देश)

कौशिक' जी की विवेचनात्मक शैली में वर्णनात्मक शैली की अपेक्षा अधिक प्राञ्जलता तथा गभीरता है। प्रश्न और उदाहरणो के द्वारा तर्कों की पुष्टि की गई है जिससे भाषा सशक्त हो गई है।

'कौशिक' जी की भाषा शैली अत्यन्त सशक्त, प्राणवान तथा प्रवाहमयी है। स्वाभाविक बोलचाल की भाषा शैली मे इन्होने अपने कथा-साहित्य की रचना की है। राजेन्द्रसिंह गौड के शब्दो मे—"भाषा और शैली की दृष्टि से भी उनकी समस्त रचनाएँ हिन्दी की अमूल्य निधि हैं।"[3]

'कौशिक जी के कथा साहित्य के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि इनकी कहानियो का रचना-विधान कुछ दोषो के होने पर भी सर्वथा सुगठित एव सुन्दर है। इनकी कहानियो के कथानक स्वाभाविक गति से आरम्भ, मध्य तथा चरम-सीमा से विकसित होते हुए पर्यवसान की ओर बढते हैं। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से इनकी कहानियाँ प्रारम्भिक कहानी-कला का आभास देती हैं। कथोपकथनो का सौंदर्य इनकी कहानियो मे सवत्र विद्यमान है। वातावरण का चित्रण कौशिक' जी

---

१ 'साथ की होली' [कहानी-सग्रह]— पृष्ठ ७०।
२. पथ निर्देश [कहानी सग्रह]— पृ० १८।
३ 'हमारे-लेखक'—पृ० १३८।

ने कहानियों में प्रस्तुत युग एवं समाज की दृष्टि से किया है। इनकी कहानियों का उद्देश्य प्रेमचन्द की तरह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना ही रहा है। भाषा-शैली सर्वथा कहानियों के पात्रों तथा समस्याओं आदि के उपयुक्त है। 'कौशिक' जी की कहानी-कला प्रेमचन्द की कहानी कला के सदृश ही है। अति-आधुनिक कथा-शिल्प की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए उनमें दोषों तथा न्यूनताओं की खोज करना अनावश्यक तथा अनुपयुक्त है। अपने युग की कहानी-कला तथा रचना-विधान की दृष्टि से इनकी कहानियाँ उत्तम कोटि की हैं। हिन्दी-कहानी-कला के विकास में इनकी कहानियों का महत्त्व सर्वोपरि है।

पंचम अध्याय

मूल्यांकन

'कौशिक' जी युग-द्रष्टा साहित्यकार थे । समकालीन समाज-सुधारवादी विचारधारा इनके सम्पूर्ण कथा-साहित्य का मूल-स्रोत रही है जिसकी कसौटी पर कहानीकार ने अपने मस्तिष्क के अन्तर्गत उभरकर आने वाली प्रत्येक समस्या का विश्लेषण किया, चित्रांकन किया और अन्त मे उसे आदर्श की दिशा प्रदान की। यथार्थ के आधार पर इन्होने आदर्श की कल्पना की है। जिन घटनाओ तथा पात्रो को ग्रहण किया है वे यथार्थ जीवन से सम्बन्धित हैं परन्तु उद्देश्य उनका आदर्शवादी रहा है, इसे भारतीय परम्परा का स्पष्ट प्रभाव कहना ही उचित होगा। सुधारात्मक प्रवृत्ति के प्रवेश तथा रूढ़िवादी परम्पराओ के खण्डन की प्रवृत्ति की मूल-भावना के आधार पर 'कौशिक' जी ने अपने साहित्य की पृष्ठभूमि तैयार की और इसी को लेकर साहित्य-सृजन की दिशा मे कदम बढ़ाया। युग-चेतना के एकतामूलक राष्ट्रवादी, सुधारवादी तथा रूढिवादी जितने भी तत्व थे उन सभी का इनकी रचनाओ मे यत्र-तत्र समावेश मिलता है। अपने समकालीन समाज की अनेक कुरीतियो पर व्यंग्यपूर्ण शैली मे कुठाराघात किया है। देवीप्रसाद धवन 'विकल' ने आपके विषय मे लिखा है—"स्व० कौशिक जी समाज सुधारक थे तथा जीवन के प्रत्यक पहलू को सुलझी हुई दृष्टि से देखने के आदी थे।"[1]

समयुगीन साहित्यिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय चेतना को 'कौशिक' जी ने अपने साहित्य मे समाविष्ट किया और अहिंसावादी, साम्यवादी तथा प्रगतिवादी इत्यादि अनेक विचारधाराओ के जन जीवन पर पडने वाले प्रभाव की अभिव्यक्ति अपनी कहानियो मे की। गाधीवादी अहिंसावादी विचारधारा से प्रभावित पात्र अपनी अहिंसा के बल पर हिंसा पर विजय प्राप्त करते हैं। इस विचार-धारा के अन्तर्गत धार्मिक सहिष्णुता की कल्पना करते हुए 'कर्त्तव्य-पालन' कहानी मे कहा है, "अजी यह तो जाहिर बात है कि मजहबी तअस्सुब ही इन झगडो की बुनियाद है। ·· ये

---

१. 'दुबे जी की डायरी'- बिजयानन्द दुबे, पृष्ठ २—ये डायरी के पृष्ठ—देवीप्रसाद धवन।

ही लोग ग्राम में झगड़ा कराने की कोशिश करते हैं।"[1] अन्तिम वाक्य में लेखक ने झगड़ा कराने वालों के प्रति घृणा का भाव व्यक्त किया है। साम्यवादी सिद्धान्तों से प्रभावित पात्रों का चरित्र प्रस्तुत करते हुए 'कौशिक' जी ने उनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में साम्य रखने पर व्यंग प्रस्तुत किया है।[2] इसी प्रकार इनके प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित पात्र जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति की आकांक्षा करते हैं यहाँ तक कि 'होली' आदि त्योहारों में भी प्राचीन रीति रिवाजों का परित्याग तथा नवीन रीति को अपनाना उन्हें अभीष्ट है।[3]

'कौशिक' जी ने अपने साहित्यिक उद्देश्य की पूर्ति तथा भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए विशेष रूप से कथा-साहित्य को माध्यमस्वरूप चुना और उसमें अनेक प्रकार के मौलिक प्रयोग प्रस्तुत किये। इनसे पूर्व-कथा-साहित्य के अन्तर्गत तिलस्म तथा ऐय्यारी से सम्बन्धित विषयों की प्रधानता रहती थी तथा उद्देश्य केवल मनोरंजन और कुत्सित आकर्षण मात्र था। मानव-जीवन का मार्मिक विश्लेषण, सामाजिक समस्याओं का उद्घाटन तथा लोक-जीवन के रहस्यों का कथा-साहित्य में समावेश नहीं हुआ था। वास्तविकता यह थी कि पूर्वकालीन कहानीकारों ने साहित्य के मनोरंजन के अतिरिक्त किसी अन्य प्रयोजन के विषय में कभी सोचा ही नहीं था। 'कौशिक' जी ने जिस समय इस विधा को अपनाया, यह नितान्त अपरिपक्वावस्था में थी। श्री राजेन्द्रसिंह गौड़ ने लिखा है—"उन्होंने हिन्दी में उस समय प्रवेश किया था जब उसके कथा-साहित्य की सीमाएँ अनिश्चित थीं और उसकी कला का समुचित विकास नहीं हुआ था। उसमें न तो जीवन की झलक थी, न उसकी समस्याओं का चित्रण। आकर्षण की सामग्री रहते हुए भी जीवन-निर्माण की शक्ति उसमें नहीं थी। ऐसी दशा में 'कौशिक' जी को अपनी प्रतिभा के

---

१ 'चित्रशाला' भाग—२, पृ० १२४।

२ "यदि आप कविता दो बार पढ़वायेंगे तो भाषण भी दो बार दिये जायेंगे।"
"भाषणों पर यह नियम लागू नहीं होता।" मन्त्री जी बोले।
"होना चाहिए। अन्यथा कम्यूनिस्ट सिद्धान्त ही बदल जायगा। सबको समान अधिकार मिलने चाहियें।" (कम्यूनिस्ट सभा)—'रक्षा-बन्धन' [क० स०] पृ० ११३।

३ "प्रगतिशील साहित्य-मण्डल के उत्साही मन्त्री बोले—"इस बार होली में कुछ नवीनता होनी चाहिए। युग बदल गये, वही पुराना ढर्रा चला आ रहा है।"
"जी हाँ होली का त्योहार किंचित मात्र भी प्रगतिशील नहीं है!" एक सदस्य बोला।" (अमेला)
—'रक्षा-बन्धन' [क०-सं०]—पृ० ९१।

विकास के लिए यथेष्ट परिश्रम करना पड़ा।"[1] 'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम सामाजिक मनोवृत्ति के सुधार की दिशा में नवीन लक्ष्य स्थापित किया तथा समाज के निम्न, मध्य तथा उच्च सभी प्रकार के पात्रों का यथार्थ चित्र उपस्थित किया। इस चित्रण में यत्र-तत्र मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी बहुत महत्त्वपूर्ण हो उठा है। मानव की अनेक प्रवृत्तियों का 'कौशिक' जी ने सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है, जैसे—

(क) "मनुष्य प्रत्येक दशा में अपने हृदय की सान्त्वना का आधार ढूँढ लेता है। अत्यन्त कष्ट तथा दुख में फँसा हुआ मनुष्य भी कोई न कोई ऐसी बात ढूँढ लेता है। जिसका आश्रय लेकर वह सारे कष्टों को मोल लेता है। मनुष्य का यह स्वभाव है, उसकी प्रकृति है। यदि ऐसा न होता तो मनुष्य का जीवित रहना कठिन हो जाता।"[2] (सतोष-धन)

(ख) "मनुष्य चाहे जितना स्वार्थी, हठधर्मी, क्रोधी तथा अत्याचारी हो परन्तु निर्भीकता-पूर्वक कही हुई सच्ची और सीधी बात उसके हृदय पर प्रभाव अवश्य डालती है, चाहे वह एक क्षण ही के लिए क्यों न हो।"[3] (सच्चा कवि)

विषय के अतिरिक्त शैली के क्षेत्र में भी 'कौशिक' जी ने मौलिक प्रयोग प्रस्तुत किये। इनसे पूर्व-कथा-साहित्य में वर्णनात्मक शैली ही विशेष रूप से प्रयुक्त होती थी। 'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिंदी कथा-साहित्य में सवादात्मक शैली का प्रयोग किया। हम इनके उन चुटीले व्यग्यात्मक प्रयोगों को भी नहीं भुला सकते जिनके द्वारा सामाजिक कुरीतियों की आलोचना की गई है। दुबे जी की चिट्ठियों को यदि कहानी-साहित्य का ही एक रूप मान लिया जाये तो वह भी इनका शैलीगत-मौलिक प्रयोग ही है।

'कौशिक' जी एक सहृदय व्यक्ति थे। किसी विषय में प्रवेश प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम सहृदयता की ही आवश्यकता होती है, जिसके माध्यम से साहित्यकार 'अन्य' (समाज, व्यक्ति प्रकृति, समस्या, विचार तथा स्वभाव) से सामञ्जस्य स्थापित करता है। सहृदय व्यक्ति दूसरे के मन की भावनाओं आकाक्षाओं और विचारों में प्रवेश करता है, तभी उसका ज्ञान 'अन्य' के विषय में निश्चित आधार धारण करता है। 'कौशिक' जी ने अपनी कला-सृजन प्रक्रिया के लिए जिन पात्रों तथा विषयों का चयन किया उनके साथ पूर्ण सहृदयता तथा सहानुभूति के साथ निर्वाह

किया। किसी विषय पर चलाऊ संकेत मात्र कर देना इनके साहित्य का लक्ष्य नहीं था। अपने कथा साहित्य के अन्तर्गत इन्होंने विशेष रूप से नागरिक परिवार तथा उसकी समस्याओं का निरूपण किया। परिवार ही जाति, समाज अथवा राष्ट्र की छोटी से छोटी इकाई है। इस छोटे क्षेत्र में हम 'कौशिक' जी का जीवन उन पात्रों के साथ घुल मिलकर एक हो गया है। इसी सहृदयता ने लेखक की विषय-ग्राह्यता को पूर्णता प्रदान की।

विषयग्राह्यता का सम्बन्ध लेखक की प्रतिभा, अध्ययन, अनुभव, अनुभूति तथा कल्पना आदि सभी तत्वों के साथ रहता है। रचनात्मक विषय का, अध्ययन द्वारा यह पूर्ण ज्ञान रखने पर ही प्रतिभावान साहित्यकार अपने अभीष्ट विषय के साथ समुचित न्याय कर सकता है। भाषा—सौष्ठव, तथा शैलीगत नवीन प्रयोगों द्वारा यह संभव हो सकता है कि वह अपरिपक्व मस्तिष्क वाले पाठकों का अल्प मनोरंजन कर सके अथवा उनकी जिज्ञासापूर्ति में सहायक हो सके, परन्तु अध्ययनशील पाठक की जिज्ञासापूर्ति उस लेखक के द्वारा संभव नहीं जिसने उस विषय को पूर्णतया ग्रहण नहीं कर लिया हो जिसे उसने रचनाबद्ध किया। अध्ययन के अतिरिक्त उस विषय से सम्बन्धित कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त साहित्यकार अपनी रचना को अधिक सफल बना सकता है। अध्ययन और अनुभव से प्राप्त ज्ञान की रिक्तता को पूर्ण करने के लिए कल्पना तथा अनुभूति की आवश्यकता होती है। ये दोनों असीमित क्षेत्र में विचरण करती हैं। अनुभूति का सम्बन्ध लेखक की उस विशेष प्रतिभा से है जिसके द्वारा वह अप्रस्तुत को प्रस्तुत करता है। इसके साथ उसकी कल्पनाशक्ति का सहयोग रहता है तथा चिन्तन इसे पुष्टि प्रदान करता है। अध्ययन मुख्यतः भूतकाल का ज्ञान कराता है, अनुभव वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण करता है तथा अनुभूति भविष्य की कल्पना से भूत और वर्तमान के साथ सामञ्जस्य स्थापित करती है। इस प्रकार सहृदयतापूर्वक अध्ययन, अनुभव और अनुभूति द्वारा विषय का सर्वाङ्गीण चित्रण प्रस्तुत करना संभव होता है।

'कौशिक' जी का अध्ययन, साहित्यिक अध्ययन की अपेक्षा अनुभूति और अनुभव के क्षेत्र में अधिक पूर्ण था। ये हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, बंगला तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं के साहित्य में प्रवेश रखते थे। इसका अर्थ यह नहीं कि इन्होंने इन सब भाषाओं के साहित्य का व्यापक अध्ययन किया था, परन्तु इतना तो निश्चय ही है कि इन भाषाओं की कुछ रचनाओं को इन्होंने पढ़ा और उनकी चिंतन तथा शैलीगत विशेषताओं का अनुभव किया। प्रतिभासम्पन्न कलाकार के लिए कुछ से सम्पूर्ण का अनुमान लगा लेना कठिन कार्य नहीं। साहित्यिक अध्ययन से

सहायक ग्रन्थों की सूची

आधार-ग्रन्थ

१ ईश्वरीय दण्ड (कहानी-संग्रह)—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', प्रथमावृत्ति—१९५९
२ एप्रिल फूल ,, ,, ,, १९६०
३ कल्लोल ,, ,, तृतीयावृत्ति—१९५८
४ 'कौशिक' जी की इक्कीस कहानियाँ (कहानी-संग्रह) प्रथमावृत्ति—१९६४
५ खोटा बेटा (कहानी संग्रह) विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' ,, १९५९
६ चित्रशाला ,, ,, पंचमावृत्ति सं०२०१३वि०
७ जीत में हार ,, ,, प्रथमावृत्ति—१९५९
८ दुबे जी की चिट्ठियाँ — विजयानन्द दुबे
९ दुबे जी की डायरी — ,, प्रथमावृत्ति—१९५८
१० पथ निर्देश (कहानी-संग्रह)— विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' ,, १९६५
११ पेरिस की नर्तकी ,, ,, ,, १९५८
१२ प्रतिशोध ,, ,, द्वितीयावृत्ति—१९६१
१३ प्रायश्चित ,, ,,
१४ बन्ध्या ,, , प्रथमावृत्ति—१९५९
१५ रक्षा-बन्धन ,, ,, , १९५९
१६ साध की होली ,, ,, ,, १९५८

सहायक-ग्रन्थ

१ आधुनिक हिन्दी-साहित्य का विकास—डॉ० श्रीकृष्णलाल, ३० मार्च १९४२
२ कहानी का रचना-विधान—डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, द्वितीयावृत्ति—१९६१
३ कहानी और कहानीकार—प्रो० मोहनलाल जिज्ञासु प्रथमावृत्ति—१९५२
४ काव्य के रूप —गुलाबराय [illegible]त्ति—१९६४
५ साहित्य-साधना के सोपान—प्रो० दुर्गाशंकर मिश्र १[illegible]
६ हमारे लेखक—राजेन्द्रसिंह गौड २[illegible]
७ हिन्दी-कहानियों की शिल्पविधि का विकास—डॉ० ल[illegible] १[illegible]
८ हिन्दी-कहानी की रचना-प्रक्रिया—डॉ० परमानन्द १[illegible]

९ हिन्दी कहानी शिल्प, इतिहास, आलोचना—डॉ० अष्टभुजा प्रसाद पाण्डय,
प्रथमावृत्ति—१९६६
१० हिन्दी कहानी—रामप्रकाश दीक्षित ,, १९६०
११ हिन्दी कहानी उद्भव और विकास—डॉ० सुरेश सिनहा ,, १९६७
१२ हिन्दी कहानियो का विवेचनात्मक अध्ययन—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा मई १९५८
१३ हिन्दी कहानी और कहानीकार—प्रो० वासुदेव, द्वितीयावृत्ति—१९५७
१४ हिन्दी कहानियाँ [आलोचनात्मक अध्ययन]—श्री राजनाथ शर्मा,
प्रथमावृत्ति—१९६१
१५ हिन्दी गद्य गाथा—सद्गुरुशरण अवस्थी, प्रथमावृत्ति
१६ हिन्दी साहित्य [उसका उद्भव और विकास]
—डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९५५
१७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,
षष्ठावृत्ति स० २००७ वि०
१८ हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ—डॉ० गोविंदराम शर्मा,
प्रथमावृत्ति—१९६१
१९ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, षष्ठावृत्ति
२० हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास—रामबहोरी शुक्ल और
डॉ० भागीरथ मिश्र, प्रथमावृत्ति १९५६

अंग्रेजी पुस्तकें

1 Creative Technique in Fiction Francis Vivian, 1946
2 Short Story Writing—Charles Barret
3 The craft of the Story—Maconohie, 1936

हिन्दी पत्र पत्रिकाएँ

१ चाँद।
२ सरस्वती।
३ साहित्य-सन्देश।

सहायक ग्रन्थो की सूची

आधार-ग्रन्थ

१ ईश्वरीय दण्ड (कहानी संग्रह)—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', प्रथमावृत्ति—१९५९
२ एप्रिल फूल ,, ,, ,, १९६०
३ कल्लोल ,, ,, तृतीयावृत्ति—१९५८
४ 'कौशिक' जी की इक्कीस कहानियाँ (कहानी-संग्रह) प्रथमावृत्ति—१९६४
५ खोटा बेटा (कहानी संग्रह) विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' ,, १९५९
६ चित्रशाला ,, ,, पंचमावृत्ति स०२०१३वि०
७ जीत में हार ,, ,, प्रथमावृत्ति—१९५९
८ दुबे जी की चिट्ठियाँ — विजयानन्द दुबे
९ दुबे जी की डायरी — ,, प्रथमावृत्ति—१९५८
१० पथ निर्देश (कहानी-संग्रह)— विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' ,, १९६५
११ पेरिस की नर्तकी ,, ,, ,, १९५८
१२ प्रतिशोध ,, ,, द्वितीयावृत्ति—१९६१
१३ प्रायश्चित ,, ,,
१४ वन्ध्या ,, ,, प्रथमावृत्ति—१९५९
१५ रक्षा-बन्धन ,, ,, , १९५९
१६ साध की होली ,, ,, ,, १९५८

सहायक-ग्रन्थ

१ आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास—डॉ० श्रीकृष्णलाल, ३० मार्च १९५२
२ कहानी का रचना विधान—डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, द्वितीयावृत्ति—१९६१
३ कहानी और कहानीकार—प्रो० मोहनलाल जिज्ञासु प्रथमावृत्ति—१९५२
४ काव्य के रूप —गुलाबराय पंचमावृत्ति—१९६४
५ साहित्य-साधना के सोपान—प्रो० दुर्गाशंकर मिश्र प्रथमावृत्ति—१९६१
६ हमारे लेखक—राजेन्द्रसिंह गौड पंचमावृत्ति—स० २०२१
७ हिन्दी-कहानियों की शिल्पविधि का विकास—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, १९६०
८ हिन्दी-कहानी की रचना-प्रक्रिया—डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव, फरवरी १९६५

९ हिन्दी कहानी शिल्प, इतिहास, आलोचना—डॉ० अष्टभुजा प्रसाद पाण्डेय,
प्रथमावृत्ति—१९६६
१० हिन्दी कहानी—रामप्रकाश दीक्षित ,, १९६०
११ हिन्दी कहानी उद्भव और विकास—डॉ० सुरेश सिनहा ,, १९६७
१२ हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा मई १९५८
१३ हिन्दी कहानी और कहानीकार—प्रो० वासुदेव, द्वितीयावृत्ति—१९५७
१४ हिन्दी कहानियाँ [आलोचनात्मक अध्ययन]—श्री राजनाथ शर्मा,
प्रथमावृत्ति—१९६१
१५ हिन्दी गद्य-गाथा—सद्गुरुशरण अवस्थी, प्रथमावृत्ति
१६ हिन्दी साहित्य [उसका उद्भव और विकास]
—डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९५५
१७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,
षष्ठावृत्ति स० २००७ वि०
१८ हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ—डॉ० गोविंदराम शर्मा,
प्रथमावृत्ति—१९६१
१९ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, षष्ठावृत्ति
२० हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास—रामबहोरी शुक्ल और
डॉ० भागीरथ मिश्र, प्रथमावृत्ति १९५६

अंग्रेजी-पुस्तकें

1 Creative Technique in Fiction-Francis Vivian, 1946.
2 Short Story Writing—Charles Barret.
3 The craft of the Story—Maconohie, 1936.

हिन्दी-पत्र-पत्रिकाएं

१ चाँद।
२ सरस्वती।
३ साहित्य-सन्देश।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	२३	जन्म १८६१	जन्म सन् १८६१
२२	१६	मुहावरों	मुहावरो
२४	४	में	में
२४	फुट नोट्स २, ३,	डॉ०	डॉ०
२७	११	इतिवृत्ति	इतिवृत्त
२७	फुट नोट २	पृ० ३७२	पृ० ६७२
३५	फुट नोट १	'चित्रशाला' [क० स०]	'प्रतिशोध' [क०-स०]
		" पृष्ठ ४५—१०१	" पृष्ठ ८५—१०१
३५	फुट नोट २	'प्रतिशोध' [क०-स०]	'चित्रशाला' [क०-स०
३७	६	दुरुपयोग	दुरुपयोग
३६	१०	व्यन्जित	व्यञ्जित
३६	फुट नोट २	हृदय पृष्ट	हृदय-पृष्ठ
३६	फुट नोट २	हुआ जाता है, फिर भी	हुआ जाता है, " फिर भी
४०	फुट नोट १	पृष्ठ ३३६	पृष्ठ ३३८
५०	७	वह प्रतिमा	यह प्रतिमा
५३	५	घृणा	घृणा
५३	फुट नोट १	कहानियाँ	कहानियाँ
६७	५	होना चाहिये।	होना चाहिये।[२]
७२	१५, २४	चरमोत्तर्प	चर्मोत्कर्ष
६१	८	महत्तव	महत्त्व